# ज्ञानरंजन की कहानियाँ

(एम० फिल० उपाधि के लिए प्रस्तुत लघु शोध-प्रबंध)

निर्देशक :

**डा. मैनेजर पाण्डेय**

प्रस्तुतकर्त्ता:

**उज्ज्वल कुमार**

भारतीय भाषा केन्द्र
जवाहरलाल नेहरु विश्वविद्यालय
नई दिल्ली—110067
1986

जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय,
भाषा संस्थान,
भारतीय भाषा केन्द्र

न्यू महरौली रोड
नई दिल्ली-110067

दिनांक: 31 मार्च, 1986

प्रमाणित किया जाता है कि श्री उज्ज्वल कुमार द्वारा प्रस्तुत "ज्ञानरंजन की कहानियाँ" शीर्षक लघु - शोध - प्रबंध में प्रयुक्त सामग्री का इस विश्वविद्यालय अथवा अन्य किसी विश्व-विद्यालय में इसके पूर्व किसी भी प्रदेश उपाधि के लिए उपयोग नहीं किया गया है । यह सर्वथा मौलिक है ।

4.4.86
अध्यक्ष,
भारतीय भाषा केन्द्र
भाषा संस्थान
जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय
नई दिल्ली - 110067

31.3.86
मैनेजर पाँडेय
शोध-निर्देशक
भारतीय भाषा केन्द्र
भाषा संस्थान
जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय
नई दिल्ली - 110067

## अनुक्रमणिका


| अध्याय | | शीर्षक | पृ० सं० |
| --- | --- | --- | --- |
| प्रथम अध्याय | : | ज्ञानरंजन की कहानियों की ऐतिहासिक स्थिति । | 1 |
| द्वितीय अध्याय | : | ज्ञानरंजन की कहानियों का विकासक्रम । | 20 |
| तृतीय अध्याय | : | ज्ञानरंजन की कहानियाँ : जीवन के यथार्थ और समस्यायें । | 40 |
| चतुर्थ अध्याय | : | ज्ञानरंजन की कहानियों में मानवीय संबंध । | 63 |
| पाँचवां अध्याय | : | ज्ञानरंजन का रचना-शिल्प । | 91 |
| | | उपसंहार । | 103 |

## पूर्व-कथन

शोध के लिए शीर्षक का चुनाव करते समय मुझे लगा कि किसी नये साहित्यकार के बारे में कार्य करना चाहिए । शायद इसी ने मुझे ज्ञानरंजन के कथा साहित्य की ओर खींचा । अपने दोस्तों से भी विचार किया, और लगभग सबों ने कहा कि ज्ञान सातवें दशक के महत्वपूर्ण कथाकार हैं, और उनके बारे में शोध-कार्य होना चाहिए ।

ज्ञान की कहानियों में मध्यवर्गीय जीवन के विभिन्न पक्ष उभर कर आते हैं । कहानियों में मेरी जाने अनजाने रूचि रही है । अनजाने तब जब बहुत कुछ न जानते हुए भी कहानियां लिखा करता था, और जानकर तब जब कहानियों के बारे में मैंने शोध करने का निर्णय किया । यह जानकर आश्चर्य होता है कि बहुत सारे कहानीकार आज भी विषय कोबगैर जाने कहानीकार बनने पर तुले हैं । इसलिए आज हमारे यहाँ कहानियों में और मिलमिलाकर पूरे साहित्य में परिमाणात्मक रचनायें तो दिखायी पड़ रही हैं, पर उनमें प्रायः गुण का अभाव है । इसका कारण कहानियों को जीवन संघर्ष के सही सैद्धान्तिक विकास व व्याव-हारिक पक्षों से काटकर देखना है ।

शोध के लिए जितना समय चाहिए था उसका सर्वथा अभाव रहा । शोध-कार्य की संक्षिप्त अकादेमीय अवधि में मैंने यह कार्य पूरा करने का प्रयास किया । इस कार्य को पूरा करने में मुझे ज्ञानरंजन से जो मदद मिली इसके लिए मैं उनका आभारी हूँ ।

अंत में मैं अपने तमाम मित्रों और श्रद्धेय डा० मैनेजर पाण्डेय का आभार व्यक्त करता हूँ जिनकी मदद से मैंने यह कार्य पूरा किया ।

दिनांक : 31 मार्च, 1986

उज्ज्वल कुमार
224, सतलज
जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय
नई दिल्ली- 110067

# प्रथम अध्याय

## ज्ञानरंजन की कहानियों की ऐतिहासिक स्थिति

ज्ञानरंजन ने कहानी लेखन का कार्य उस दौर में शुरु किया जब नई कहानी आन्दोलन अंतिम पड़ाव पर था। ज्ञानरंजन की प्रथम कहानी "एक मनहूस बंगला" उन्नीस सौ साठ में छपी।[1] इसके साथ ही क्रमशः "गोपनीयता", "अमरूद का पेड़" शीर्षक कहानियाँ उन्होंने लिखीं जिनसे हिन्दी कथा साहित्य में वे एक महत्वपूर्ण हस्ताक्षर के रूप में उभर कर आने लगे। उन्होंने लगभग एक दशक के अपने कहानी लेखन में तत्कालीन समाज की परिस्थितियों को मध्यवर्ग व उनके बनते बिगड़ते सम्बन्धों के सन्दर्भ में तलाशने की कोशिश की।

ज्ञानरंजन के कहानी लेखन के दौर में नई कहानी आन्दोलन से जुड़े कहानीकारों की चिंता विभिन्न प्रकार से व्यक्त होती थी, और "ऐयाश प्रेतों का विद्रोह" के नाम से कहानी की एक विशेष प्रवृत्ति की निन्दा या फिर "कहानी को जांघों के जंगल" में भटकने से मुक्त करने का आवाहन सुनाई पड़ने लगा था। इस आवाहन के पीछे दो कारण मुख्यरूप से काम कर रहे थे। पहला तो यह कि

---

1. कथाकार ज्ञानरंजन का रचना संसार, संपादक: सत्यप्रकाश मिश्र, पृ0 93.

उन्नीस सौ पचास के बाद विकसित नई कहानी की धारा शिथिल होने के बावजूद बिल्कुल रुद्ध नहीं हुई थी, और प्रायः नई कहानी आन्दोलन से जुड़े कथाकार लेखन में लगे थे । दूसरे साठोत्तरी दौर में कहानी के नाम पर लिखी जाने वाली विकृत कहानियों से नई कहानी के लेखकों में एक विक्षोभ था । इसलिए इस पूरे कालखंड में कहानी एक प्रकार से अपने अस्तित्व के लिए संघर्ष करती दिखाई पड़ती है । ज्ञानरंजन कहानी की इस अस्तित्व रक्षा की लड़ाई में शामिल दिखाई देते हैं । उनके समग्र कहानी लेखन की इस विशेष प्रवृत्ति की एक ऐतिहासिक पहचान बनती दिखाई देती है । कहानी को कहानी के रूप में बचाये रखने और उसकी सामाजिक भूमिका को प्रतिष्ठित करने के लिए ज्ञानरंजन कई संदर्भों में सचेष्ट दिखते हैं । वैसे उस दौर में ज्ञानरंजन का यह प्रस्ताव कहीं कहीं कमजोर स्थितियों में भी दिखाई पड़ता है, और लगता है कि जिस अकहानी के खिलाफ ज्ञान सचेष्ट हैं, वह कहीं उनके अन्दर प्रवेश करती जा रही है ।

ज्ञानरंजन की कहानियों को नई कहानी आन्दोलन से जुड़े कथाकारों की कुछ विशेष प्रवृत्तियों से भी जोड़ कर देखा जा सकता है । छठे दशक में हिन्दी साहित्य की कहानी और कविता में जो प्रवृत्तियाँ दिखाई पड़ती हैं उनमें व्यक्तिवाद, लघुमानवाद, कुंठा, विकृत मनोविनोद, आत्माभिव्यक्ति आदि तत्व प्रचुर हैं । नई कविता नाम से प्रचलित काव्य लेखन में व नई कहानी नाम से प्रचलित कहानी लेखन में ये प्रवृत्तियाँ दिखाई पड़ती हैं । वैसे पचास के दौर

से हिन्दी साहित्य में नई कहानी या नई कविता का आन्दोलन शुरू होता है । पचास के बाद का भारत विचारधारात्मक संघर्ष की तीव्रता को महसूस करते हुए नई स्थितियों को स्वीकारने की कोशिश में लग जाता है । तेलंगाना के असफल किसान विद्रोह के बाद शासक पक्ष के विचार जनता के विभिन्न हिस्सों में तेजी से फैलने की कोशिश होती है । अस्वाभाविक नहीं है अगर इस कोशिश में कुछ कहानीकारों ने जाने या अनजाने सरकारी व शासक पक्षीय शक्तियों के हिस्से के रूप में काम किया हो ।

पचास के बाद के दौर में मुख्यतया से मध्यवर्गीय जीवन संदर्भों से जुड़ी कहानियाँ लिखी गईं । उसमें भी मध्यवर्ग में मौजूद विकास के पहलुओं पर जोर देने के बजाय उनके अंदर के निरुद्देश्य विक्षोभ, घुटन, वैयक्तिक चिंतन, संत्रास को प्रमुखता दिया गया, और इस प्रकार सामाजिक जीवन के गतिशील यथार्थ के चित्रण को महत्व नहीं दिया जा सका । मध्यवर्ग या किसी भी वर्ग में मौजूद विक्षोभ, घुटन, संत्रास का निश्चित अर्थ होता है, और इनके निश्चित सामाजिक, आर्थिक या राजनीतिक कारण होते हैं । आदमी अपने आसपास की परिस्थितियों से परिचालित होता है, और वह इनके दबावों को महसूस करने के साथ-साथ इनके खिलाफ गुस्सा और सक्रियता की भावना से भी भरा होता है । वह अपने अंदर की दुःख-तकलीफ व घुटन की परतों से न सिर्फ वाकिफ होना चाहता है, बल्कि इनके कारणों को जानना चाहता है । इसलिए कहानीकार के लिए आवश्यक है कि वह उसका इस उद्देश्य में साथ दे । यानी वह व्यक्ति को अंधकार से

मुक्त होने में मदद करे न कि सिर्फ यह बताता चले कि, देखो भाई बड़ी तकलीफ है, घुटन है, पीड़ा है, आदि-आदि । साहित्यकार या कहानीकार का इस प्रकार का नजरिया सिर्फ पेड़ को देखने का है और जंगल को भूल जाने का । किसी भी कहानीकार का यह दृष्टिकोण निस्संदेह लोगों को स्थितियों का एकपक्षीय ज्ञान करा पायेगा और उसे यथार्थ के तमाम पक्षों को समझाने में असफल होगा । नई कहानी की धारा से जुड़े कहानीकारों की एक प्रकार की यह कमजोरी दिखाई पड़ती है । मोहन राकेश, निर्मल वर्मा, राजेन्द्र यादव या कमलेश्वर यथार्थ की विकासशील तस्वीर नहीं रख पाते, और आदमी के उस संघर्ष को सचेतन रूप से नहीं उभार कर रखते जो लोगों को घुटन व संत्रास की स्थितियों से मुक्ति दिलाने के लिए प्रेरणा प्रदान करे । छठे दशक में तमाम आर्थिक, राजनीतिक कारणों से वातावरण में मौजूद विक्षोभ व घुटन को स्वीकार किया जा सकता है । बावजूद इसके यह जरूरी है कि ये कहानीकार आने वाले कल के लिए लोगों के उस संघर्ष को चित्रित करते, जो व्यक्तिगत स्तर पर या ग्रुपों में विभिन्न रूपों में अभिव्यक्त होते हैं ।

ज्ञानरंजन साठोत्तरी दशक में कहानी की इस परम्परा को विकसित कर पाते हैं या नहीं ? वे यथार्थ के गतिशील पहलुओं को विश्लेषित करते हुए उनका कलात्मक पुनर्सृजन कर पाते हैं या नहीं ? और उनके इस पुनर्सृजन से उन स्थितियों को खत्म करने में मदद मिलती है या नहीं जिनके खिलाफ वे लिख रहे थे ? ये कुछ ऐसे प्रश्न हैं जिनकी

ज़मीन पर खड़ा होकर हम ज्ञानरंजन की ऐतिहासिक स्थिति को तोल सकते हैं, उनकी कहानियों का समग्र मूल्यांकन प्रस्तुत कर सकते हैं। और इसी आधार पर ज्ञानरंजन की रचनाशीलता को प्रेमचन्द, प्रसाद, चन्द्रधर शर्मा गुलेरी जैसे महत्वपूर्ण कहानीकारों की परम्परा से जोड़ या अलगा सकते हैं। इन तमाम प्रश्नोंके जवाब अगर हम ज्ञानरंजन की कहानियों में खोजें तो हमें नई कहानी से जुड़े कहानीकारों की प्रवृत्तियों और ज्ञानरंजन की कहानियों में मौजूद प्रवृत्तियों के बीच की समानताओं व असमानताओं को निकालने होंगे।

ज्ञानरंजन की कहानियों को नई कहानी धारा से जुड़े कहानीकारों से जोड़ कर देखा जा सकता है। इस कथन का तात्पर्य है कि ज्ञानरंजन की कहानियों की प्रवृत्तियाँ नई कहानी की प्रवृत्तियों से साम्य रखती हैं। मसलन नई कहानी से जुड़े कहानीकारों ने प्रायः मध्यवर्गीय जीवन स्थितियों को अपनी कहानियों में उठाया है। ज्ञानरंजन भी अपनी कहानियों में मध्यवर्ग के जीवन से तमाम संदर्भों व चरित्रों को चित्रित करते हैं। दूसरे, नई कहानी से जुड़े कहानीकारों की तरह ज्ञानरंजन ने मध्यवर्ग के अंदर मौजूद घुटन, पीड़ा, व संत्रास को अपनी कहानियों में रखा है। इस आधार पर ज्ञानरंजन को हम नई कहानी से जुड़े कहानीकारों से जोड़ कर देख सकते हैं।

दूसरी तरफ ज्ञानरंजन में कुछ ऐसी प्रवृत्तियाँ भी दिखायी पड़ती हैं, जो उन्हें नई कहानी से अलग करती हैं। इन प्रवृत्तियों के कारण वे एक तरफ तो नई कहानी से अपने को अलग कर लेते हैं और

दूसरी तरफ अकहानी के करीब हो जाते हैं । ज्ञानरंजन पर अकहानी का अगरप्रभाव दिखाई पड़ता है, तो उसके कुछ निश्चित कारण हैं. जिन्हें ध्यानपूर्वक विश्लेषित करने की जरूरत है ।

सबसे पहले यह बात साफ हो जानी चाहिए कि ज्ञानरंजन स्वयं को किस प्रकार नई कहानी से जोड़कर चलते हैं । और इस बात को साफ तौर से समझने के लिए अगर हम ज्ञान की कहानियों में देखते हैं, तो उन प्रवृत्तियों को देख पाते हैं जो नई कहानी में शामिल हैं । ज्ञानरंजन के तमाम चरित्र प्रायः मध्यवर्गीय जनसमुदाय से आते हैं । उसके पात्रों में मुख्यपात्र "मैं" होता है जो ऐतिहासिक रूप से मध्यवर्गीय जीवन संदर्भों में मौजूद दबाव के विरोध स्वरूप उभर कर आता है । "मैं" शब्द व्यक्ति को प्रस्तुत करता है, और वह भी उस मध्यवर्गीय व्यक्ति को जिसका जीवन विभिन्न सामाजिक आर्थिक दबावों के कारण घुटन से भरा है । यह पूँजीवादी समाज की इस प्रकार उपस्थिति का सूचक है ।

ज्ञानरंजन की कहानियों में मध्यवर्ग में मौजूद घुटन, तड़पन, संत्रास नई कहानी से जुड़े कहानीकारों की तरह ही दिखाई पड़ते हैं । ज्ञान की कहानियों के विभिन्न चरित्र विभिन्न स्थितियों में एक पीड़ा को झेलते लगते हैं, और वे इस पीड़ा के लिए आलोचनात्मक रुख रखते हैं । उदाहरण के तौर पर "गोपनीयता" कहानी को देखें । इस कहानी में एक अविवाहिता गर्भवती होने के मध्यवर्गीय अपमान में पूरे परिवार के साथ घुट रही है । इसी प्रकार "पंटा" कहानी में कहानी

का मुख्य चरित्र "मैं" सूक्ष्म बुद्धिजीवियों के घुटनयुक्त माहौल में प्रवेश करता है, और स्वत:स्फूर्त तरीके से विरोध करता है और उसके कारण उसे जबर्दस्त पिटाई लगती है वह वह पुन: वापस "पेट्रोला" चला आता है। "पेट्रोला" यानी कुछ शहरी नौजवानों की धूम-मस्ती का निर्विरोध अड्डा ? क्या सूक्ष्म बुद्धिजीवियों के ऐयाश जीवन का यही जवाब कहानीकार को दिखाई पड़ता है ? या वह उन कारणों के बीच जाने से बचना चाहता है जिनके कारण समाज में बुरे लोग प्रतिष्ठा पा रहे हैं ? फिर इन कारणों को कुछ हद तक खोजकर भी क्या ज्ञान स्वत:स्फूर्त तरीके से होटल में कुन्दन सरकार के विरोध में सोडावाटर की बोतलें फोड़ कर सामाजिक बदलाव की प्रक्रिया की शुरुआत की प्रत्याशा करते हैं ? ज्ञान की अन्य कहानियों में भी जीवन के लगभग यही संदर्भ निराशा, क्षोभ, घुटन किसी न किसी रूप में उभर कर आये हैं ; जो मध्यवर्गीय चेतना से प्रभावित हैं।

इस प्रकार की कहानियों से ज्ञानरंजन ने स्वयं को एक ऐसे कहानीकार के रूप में हमारे सामने उपस्थित किया है, जो जीवन के मध्यवर्गीय सोच को परिलक्षित करते हैं, और समाज की विकासशील शक्तियों से अलगाव में अपने अस्तित्व को देखते हैं। यह बात पचास के पहले दौर के कहानीकारों में नहीं थी। प्रेमचन्द, या अन्य कहानीकारों ने अपनी कहानियों में मध्यवर्ग के जीवनसंदर्भों को रखने के साथ साथ उनके अंदर के संघर्षमय स्वरूप को भी पहचाना। यह संघर्षमय रूप और कुछ नहीं उनमें परिस्थितियों के खिलाफ लड़ने की प्रेरणा और ताकत थी। नई कहानी के कहानीकारों में यह तत्व जहाँ एक ओर

अनुपस्थित दिखाई देता है, वहीं उनकी कहानियों के पात्र इस प्रकार के हैं जैसे वे स्थितियों से टकराने और इनमें बदलाव लाने की कोशिश करने के बजाय स्थितियों को झेल रहे होते हैं । और यह स्थितियों के साथ शिकवा-शिकायत और इन्हें झेलने वाली मानसिकता निष्क्रियता की ही सूचक है । प्रेमचंद युगके कहानीकारों में यह निष्क्रिय मानसिक बोध नहीं था । वह साहित्य को एक ऐतिहासिक जरूरत से संचालित मानते थे, और उसका उपयोग सचाई के पक्ष में संघर्षरत शक्तियों के लिए प्रकाश-पुंज के रूप में करना चाहते थे । नई कहानी के कहानीकारों में इस प्रकार की ऐतिहासिक भावना की शायद तीव्रता नहीं थी, और वे कहानी को आम जनता के जीवन संघर्षों के साथ जोड़कर नहीं देख पा रहे थे । यही स्थिति ज्ञानरंजन के साथ भी थी ।

ज्ञानरंजन का कहानी लेखन साठोत्तरी में शुरू होता है । उन्नीस सौ साठ के बाद भारतीय जनमानस निराशा और विक्षोभ की स्थितियों से गुजर रहा होता है । एक-एक कर तमाम संस्थाओं और विचारों का खोखलापन उसके सामने स्पष्ट होने लगता है । भूख, गरीबी, अकाल, अशिक्षा उसके सामने खड़े हैं । राजनीतिक नेतृत्व की भ्रष्टता इन तमाम चीजों के साथ-साथ है । आदर्श-नैतिकता आदि का इस युग में बड़े पैमाने पर क्षरण होता है । मध्यवर्ग इस स्थिति से सबसे ज्यादा निराश और कुंठित है । मध्यवर्ग एक ऐसा वर्ग है जो बहुत जल्दी खुश और बहुत ही जल्दी दुःखी भी होता है । तात्का-लिकता उसके मानसपटल पर अंकित होती है, और लाभ-हानि को वह शीघ्र गिन लेता है ।" भ्रमों में फंसा रहना और गंभीर अमल और

संघर्ष से डरना ही मध्यवर्ग की विशेषता है ।'[1] ज्ञानरंजन निस्संदेह मध्य वर्ग की इस ढुलमुल स्थिति को चित्रित करने से परिचालित हैं ।

परन्तु मध्यवर्ग की एक दूसरी स्थिति भी है जिसे शायद ज्ञानरंजन अभिव्यक्ति नहीं दे पाते हैं । प्राय: मध्यवर्गीय लेखन की कमजोरी मध्यवर्गीय समाज को कोसने में अभिव्यक्ति पाती है न कि उसके चरित्र-परिवर्तन को चित्रित करने और दिशा देने में । मध्यवर्ग की चारित्रिक कमजोरी शीघ्र निराश होना तो जरूर है, परंतु इस निराशा में वह कभी-कभी अन्याय व बुराइयों के स्रोतों के खिलाफ अत्यधिक गुस्से से भी भर जाता है । ऐसी स्थिति इतिहास में अनेक बार दिखाई पड़ती है जब मध्यवर्ग ने व्यापक परिवर्तन के पक्ष में साथ दिया या फिर व्यापक अधिरगर्दी को समाज के सामने छा जाने में भी मदद की । अब प्रश्न है कि कहानीकार मध्यवर्ग से इन दोनों में से क्या करवाना चाहता है ? वह मध्यवर्ग को मूल वर्गों के परिवर्तनकामी संघर्षों के साथ जोड़ना चाहता है, या उसे उसके भ्रमों में निराशा व संत्रास के बीच फंसाये रखना चाहता है ?

ठीक साठोत्तरी दशक के अंत में भारत के राजनीतिक पटल पर एक नई घटना दिखाई पड़ती है । वह घटना है, कांग्रेसी राजनीति और ढुलमुल मार्क्सवादी राजनीति के खिलाफ एक व्यापक जन उभार । यह जन उभार बंगाल के किसी सुदूर ब्लॉक से शुरू होकर अखिल भारतीय

---

1. ल्यु श्याओ ची --"हम अच्छे कम्युनिस्ट कैसे बनें", पृ0 124.

चरित्र ग्रहण करने लगता है । किसान इस उभार की रीढ़ होते हैं । इस जन उभार को आजाद भारत के इतिहास में पहली बार चिन्हित किया जा सकता है । इसके द्वारा साम्राज्यवादी शक्तियों के भारत के ऊपर बढ़ते प्रभाव और जमींदारों-पूँजीपतियों के शोषण के खिलाफ सशस्त्र ... प्रतिरोध की आवाज लगाई जाती है । इस प्रकार के जन विद्रोह से देश की तमाम संस्थाओं - व्यवस्थापिका, कार्यपालिका, न्यायपालिका को चुनौती दी जाती है । सांस्कृतिक ~~कककक~~ क्षेत्र में पतनशील व गुलाम मानसिकता पैदा करने के कारकों को नष्ट कर देने की वकालत की जाती है । अपनी सीमा में आजादी की लड़ाई के बाद यह पहले किस्म का जनान्दोलन है ।

1967 में फूट पड़े इस व्यापक किसान विद्रोह की निस्संदेह एक पृष्ठभूमि रही है । इस पृष्ठभूमि के अंतर्गत पूरे एक दशक और उसके पहले के राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक दबावों का योगदान रहा है । खासकर 1960 के बाद भारतीय राजनीति में फैले भ्रष्टाचार अवसरवाद ने जनमानस को झकझोर दिया था, और आर्थिक संकटों ने लोगों को विभिन्न आन्दोलनों में कूदने को मजबूर कर दिया । इस दौरान विभिन्न तबकों के अंदर व्यापक गुस्सा उभरता गया, और इसकी अभिव्यक्ति 1967 के चुनावों में कांग्रेस पार्टी की हार और विपक्षी पार्टियों की संविद सरकारों के गठन में हुई ।[1] परंतु संविद सरकारों ने जनता की आशाओं से खिलवाड़ किया, और आंतरिक कलह व कांग्रेस की एकाधिकारवादी राजनीति के कारण शीघ्र ही विघटित

---

1. एक्सक्लोमन इन ए सबकन्टीनेंट, संपादित रॉबिन ब्लैकबर्न, पृ0 12.

हो गई।

इसी दशक में भारत के विभिन्न हिस्सों में छात्र आन्दोलन और अन्य तबकों के संगठित या स्वतःस्फूर्त आन्दोलन हुए। इस पूरी पृष्ठभूमि में 1967 का किसान विद्रोह उभर कर आया। इस विद्रोह में मध्यवर्ग के लोगों की भूमिका उल्लेखनीय रही। कॉलेज और युनिवर्सिटी छात्रों, शिक्षकों, डाक्टरों इंजीनियरों ने अपने पेशे व भविष्य को अनदेखा कर क्रांतिकारी कतारों में जा मिले, और उन्होंने संघर्ष में सक्रिय हिस्सेदारी की। आंतरिक कमजोरियों व सत्ता पक्ष के दमन के कारण फौरी तौर पर यह विद्रोह दबा दिया गया, परंतु इतिहास के राख में इसकी चिनगारियाँ बनी रहीं।

ज्ञानरंजन का कहानी लेखन पूरे इस दौर में होता है। उन्होंने अपनी अधिकांश कहानियों में मध्यवर्गीय जीवन स्थितियों का वर्णन किया है। परंतु वे मध्यवर्गीय चरित्रों में प्रायः वैसे चरित्रों को शामिल नहीं करते जो उस दौर में तमाम किस्म के शोषण व उत्पीड़न के खात्मे के लिए देश की मूलभूत शक्तियों के साथ संघर्ष कर रहे थे। आखिर ऐसा क्यों हुआ ? यह यक्ष प्रश्न ज्ञानरंजन की कहानियों की ऐतिहासिकता पर विचार करते समय स्वाभाविक रूप से उठता है।

ज्ञानरंजन की कहानियों में एक और प्रवृत्ति दिखाई पड़ती है जिसकी ऐतिहासिकता को समझना भी जरूरी है। ज्ञानरंजन की कहानियों में प्रेम सम्बन्धों के जुड़ाव व टूटन पर बहुत सारे संदर्भ आते हैं। प्रेम सम्बन्धों के विकास व बिखराव के बारे में कहानियाँ

लिखना अनावश्यक नहीं है । ज्ञानरंजन ने इसलिए अपनी कहानियों में प्रेम के विकासमान या ह्रासमान क्षणों का उल्लेख कर एक जरूरी कार्य को पूरा किया । वे अपनी कहानियों में प्रेम सम्बन्धों पर पड़ रहे आर्थिक, सामाजिक दबावों का भी ज़िक्र करते हैं, और प्रेम सम्बन्धों के बिखराव के लिए तमाम कारणों को आलोचनात्मक घेरे में खड़ा कर देते हैं । परंतु वे इन कहानियों में बहुत स्थानों पर अपनी बात में आक्रोश लाने के ख्याल से ।शायद। ऐसे शब्दों का या वाक्यों का प्रयोग करते हैं, जो पूरी कहानी के मूल्यांकन के बारे में अलग से विचार करने को बाध्य करती है । उनकी कहानियों में प्राय: इस प्रकार के जुमले मिल जाते हैं -- "मैंने ध्यान दिया हॉल में दो प्रकार की महिलायें थीं । कुछ बिल्कुल हॉगर चिरंजान और कुछ जिन्हें देखकर लगता बाल्टी भर के हगती होंगी ।" फिर वे कहते हैं ---- "मादर.... मेरा दिमाग एकदम कड़क हो गया ....".[1] दूसरी जगह वे कहते हैं -- "शायद वह दो एक चुम्बन और लेती लेकिन इसी बीच उसका तौलिया नीचे गिर गया था ।".[2] एक अन्य जगह वे लिखते हैं -- "वे बड़ी चतुर होती हैं और अगर वे न चाहें तो अधिक से अधिक उनकी लँगोटी लेकर भाग सकते हैं या पंम्पिंग-वंपिंग । और इसकी उन्हें परवाह नहीं होती । बस में, सड़क की भीड़ में, घर के नौकर-चाकर और उन दोस्तों को, जिनसे आजिज आ जाती हैं, इतना सर्कस तो यूँ भी "अलाऊ" कर देती हैं ।".[3]

---

1. ज्ञान रंजन -- घंटा,
2. ज्ञानरंजन --- दांपत्य,
3. ज्ञानरंजन --- रचना-प्रक्रिया,

ज्ञानरंजन ने अपनी कुछ कहानियों में इस प्रकार के वाक्यों का प्रयोग किया है । इन वाक्यों के द्वारा शायद वे सहजता और स्वाभाविकता पैदा करने का इरादा रखते हैं । इसलिए उनकी पत्नी उन्हें चूमने लगती है, और उसका ।पत्नी का। तौलिया खुलकर गिर जाता है, तो ज्ञान इसे भी वर्णन करने से अपने को रोक नहीं पाते । प्राय: हम सारे लोग जानते हैं कि पति-पत्नी के बीच एक स्वाभाविक यौन सम्बन्ध होता है । परंतु किसी भी कहानीकार को इस संबंध के बारे में इससे जुड़े विभिन्न क्रियाकलापों के बारे में ज्यादा बताने की जरूरत नहीं होती । इनके वर्णन से समाज को कोई विशेष लाभ-हानि नहीं । हाँ, कहानी या रचना का दायरा थोड़ा संकीर्ण अवश्य होता है । इसी प्रकार धनवान लोगों की मोटी महिलाओं को गाली दे देने से कोई बड़े परिवर्तन की कल्पना नहीं की जा सकती । इससे अपना ही थोथापन जाहिर होता है । साथ ही महिलाओं के बारे में ज्ञानरंजन जो "रनिंग कमेंट्री" देते चलते हैं, और घर के नौकरों, बस के पैसेंजरों के बीच उन्हें जिसप्रकार मनोरंजन की वस्तु के रूप में चित्रित करते हैं उससे कदाचित ही कोई महिला अप्रसन्न हुए बिना रह सकती है । आखिर वे महिलाओं के बारे में ऐसी बातें लिखकर क्या संप्रेषित करना चाहते हैं ? उन्हें इस प्रकार के विचार व्यक्त करने से जरा भी अश्लील होने का खतरा नहीं लगता ? कहानी की इस प्रवृत्ति के साथ ज्ञानरंजन जाने अनजाने स्वयं को अकहानी की प्रवृत्तियों में शामिल कर लेते हैं, और इससे उनकी कहानी कमजोर हुई है । वैसे इस कमजोरी के पक्ष में भी तर्क दिये जा सकते हैं, और कहा जा सकता है कि

ज्ञानरंजन इस प्रकार के वाक्यों का प्रयोग कर किसी मध्यवर्गीय निषेध भाव व गुस्से को व्यक्त कर रहे हैं, परंतु वे जिस कीमत पर इस गुस्से को व्यक्त कर रहे हैं उसका भी ध्यान रखना आवश्यक है ।

ज्ञानरंजन ने इस प्रकार नई कहानी से प्रभाव ग्रहण करते हुए अपना लेखन किया । उन्होंने एक कहानीकार के रूप में प्राय: दो प्रवृत्तियों के बीच चलने की कोशिश की, और नियंत्रण के अभाव में कभी इस प्रवृत्ति या कभी उस प्रवृत्ति के साथ स्वाभाविक रूप से निकटता स्थापित कर ली है । उनके लिए ये दो प्रवृत्तियाँ लेखन की दो धारायें थीं । पहली नई कहानी और दूसरी अकहानी । ज्ञान ने इनके बीच एक सार्थक विकास करने की कोशिश की, और इन दो प्रवृत्तियों से प्रभावित होने के बावजूद स्वयं की एक विशेष प्रवृत्ति कहानी लेखन में उपस्थित करने की कोशिश की ।

बावजूद इसके ज्ञानरंजन की कमजोरी उनकी मध्यवर्गीय सीमा की है । उनके मूल्यांकन के साथ इस कमी को जोड़कर देखा जा सकता है । ज्ञान को अगर मध्यवर्गीय चेतना का कहानीकार कहा जा सकता है, तो इसका अर्थ यह है कि उन्होंने अपनी कहानियों में मुख्य चरित्रों को, उनके रूप-रंग और उनकी रूचि को मध्यवर्गीय दृष्टिकोण से देखा । मध्यवर्ग के पात्रों को केन्द्र में रखकर कहानियाँ लिखना, मध्यवर्गीय चरित्रों को उनमें चित्रित करना और मध्यवर्गीय दृष्टिकोण से कहानियाँ लिखने में फर्क है । मध्यवर्गीय पात्रों को केन्द्रित करते हुए इन चरित्रों

के विकास को चिन्हित किया जा सकता है, और परिस्थितियों के दबाव के मुताबिक उनमें हो रहे विकास को लक्षित किया जा सकता है । और इस प्रकार कहें तो मध्यवर्गीय चरित्रों का रूपान्तरण दमन, घुटन और अपमान व संत्रास जैसी स्थितियों को समाप्त करने के लिए किया जा सकता है । ज्ञानरंजन ने कहानी लिखते हुए अपनी इस लेखकीय प्रतिभा को विकसित करने का प्रयास उस हद तक नहीं किया । यह सही है कि उनके एक दशक के कहानी लेखन में चिन्तन और लेखन के धरातल पर परिवर्तन लक्षित किये जा सकते हैं, परंतु ये परिवर्तन उस सीमारेखा को पार नहीं करते जहाँ से ज्ञानरंजन मध्यवर्गीय चेतना को छोड़कर व्यापक जनसमुदाय के अहसासों व उनकी संघर्षशील ~~जरूरतें~~ जरूरतों के मुताबिक स्वयं को परिवर्तित कर पाते । प्रायः बहुत सारे लेखकों, कहानीकारों के साथ सामाजिक यथार्थ के स्पष्ट दबाव के कारण परिवर्तन देखे जा सकते हैं । लेखक जहाँ से शुरू होता है, अपने लेखन में वह लगातार परिष्कार व परिवर्तन करता चलता है, और वह व्यापक समाज के अनुभवों को अपने लेखन में शामिल करता चलता है ताकि लोगों को प्रेरणा दे सके । ज्ञानरंजन ने जहाँ से शुरू किया वहाँ से उन्होंने स्वयं को कथ्य के स्तर पर और शैली के स्तरपर भी माँजा अवश्य, परंतु वे अंततः अपनी कहानियों को व्यापक जनसमुदाय की चेतना से

लेस नहीं कर पाये। उनकी अंतिम कहानियाँ "पंटा" या "बहिर्गमन" भी कुल मिलाकर मध्यवर्गीय सीमाओं में आबद्ध कहानियाँ हैं, और इनमें व्यापक समाज के गतिशील यथार्थ का प्रायः सार्थक चित्रण नहीं हो पाया है। मध्यवर्गीय दृष्टिकोण से चीजों को देखने के कारण ही वे कुंठा, घुटन, संत्रास जैसी वैयक्तिक सच्चाइयों को तो देख पाते हैं, परंतु इन्हें व्यापक परिप्रेक्ष्य प्रदान कर समाज के परिवर्तनशील और विकासमान सच्चाइयों से नहीं जोड़ पाते। और इस प्रकार मिल-मिलाकर वे अपने कहानीकार चरित्र को मध्यवर्गीय चेतना से मुक्त कर व्यापक संदर्भों से जोड़ पाने में असफल होते हैं।

ज्ञानरंजन की कहानियों का अगर हम मोटे तौर पर विभाजन करें, तो कह सकते हैं कि ज्ञान ने तीन प्रकार की कहानियाँ लिखीं।

(क) परिवार के संदर्भ में,
(ख) नारी के संदर्भ में,
(ग) मध्य बुद्धिजीवियों के संदर्भ में।

इन तीन विभाजनों को अगर हम अंतर्वस्तु के आधार पर देखें तो पायेंगे कि परिवार के संदर्भ में लिखी कहानियों में ज्ञान पर्याप्त रूप से गंभीरता का भाव रखते हैं, और अंतर्वस्तु को सामाजिक जीवन-संदर्भों के विभिन्न क्रिया-कलापों के साथ जोड़ते हैं। (ख), श्रेणी की कहानियों में ज्ञानरंजन की यह गंभीरता गायब हो जाती है, और वे बड़े ही मजाकिया अंदाज में स्त्रियों के विभिन्न व्यवहारों का जिक्र करते

हैं । इसमें अंतर्वस्तु के प्रति उनका जरा भी गंभीर दृष्टिकोण नहीं रहता, और स्त्रियों के संदर्भ में खास तौर से हल्का भाव देखा जा सकता है । प्यार-मुहब्बत सारे संदर्भ इन कहानियों में इसी प्रकार हल्केपन के साथ "ट्रीट" किये गये हैं । और ॥।॥, श्रेणी की कहानियों में ज्ञानरंजन अंतर्वस्तु को बिल्कुल अलग संदर्भों में पेश करते हैं । यहाँ उनका आलोचनात्मक लेखक एक उग्र रूप में दिखाई पड़ता है और सामाजिक असमानता व अधःपतन, छद्म संस्कृति के खिलाफ स्वतःस्फूर्त विद्रोह में उतर जाता है । इस संदर्भ में "घंटा" कहानी को रख सकते हैं ।

ज्ञानरंजन की कहानियों के इन तीन उपविभाजनों के द्वारा अन्तर्वस्तु पर गौर से विचार करने के बाद यह बात सामने आती है कि ज्ञान एक कहानीकार के रूप में अपने समय का प्रतिनिधित्व कर रहे थे । यह अवश्य है कि एक सफल कहानीकार के रूप में उनकी कोशिश होनी चाहिए थी कि वे समय की दीवारों से पार की बातों को भी देख ~~सक~~ पाने में समर्थ होते । परंतु समय की सीमा में मध्यवर्गीय चेतना के एक कहानीकार के रूप में उनका मूल्यांकन किया जाना आवश्यक है । ऐतिहासिक रूप से यह जरूरी नहीं कि हर कहानीकार या साहित्यकार समग्र चेतना से लैस हो, और उसकी कलाकृति का मूल्यांकन उस काल की परिधि के अंदर भी किया जाना जरूरी है । इसी आधार पर साहित्य की ऐतिहासिकता की जाँच हो सकती है, और इसे वर्तमान संदर्भों से जोड़कर देखने और इसकी प्रासंगिकता तलाशने में मदद मिल सकती है ।

ज्ञानरंजन की कहानियों के जो तीन विभाजन हैं वे दरअसल तत्कालीन मध्यवर्गीय समाज में मौजूद तीन प्रवृत्तियों कोदिखाते हैं। साठोत्तरी दशक में मध्यवर्गीय परिवारों के टूटने और उनमें मौजूद संत्रास, घुटन को विशेष रूप से लक्षितकिया जा सकता है। अपनी कहानियों के द्वारा ज्ञानरंजन ने पारिवारिक विघटन की इस प्रक्रिया पर उँगली उठाई है और इसे आर्थिक, सामाजिक, दार्शनिक संदर्भों में चिन्हित करने का प्रयास किया है। मध्यवर्गीय जीवन संदर्भों में इस प्रकार के लेखकीय अहसास निस्संदेह समाज के जरूरी सत्यों को उद्घाटित करते हैं। ज्ञानरंजन की दूसरी श्रेणी की कहानियाँ उस समय के युवा मानस को प्रतिबिम्बित करता है। उस समय युवा मानस में एक विशेष प्रकार के पहलू जुड़ने लगे थे और लोग इसे अपने क्रियाकलापों में व्यवहृत कर रहे थे। यह पहलू था -- खुलापन का, एक प्रकार की स्वच्छन्दता का। इसके लिए युवा फैशनपरस्ती और हिप्पी जीवन का "कल्ट" अपनाने में लीन थे। इस प्रकार के सोच और व्यवहार का परिणाम था, स्त्रियों के संदर्भ में और अन्य संदर्भों में हल्कापन का भाव। यह ऐसा भाव था जिसमें प्यार-मुहब्बत सब आई-गई चीज बन गई थी। उनका मोल कोई नहीं था, और इनकी गंभीरता में गिरावट आई थी। ज्ञानरंजन अपनी प्रेम कहानियों में इसी बात को रखते हैं। वे स्त्रियों के बारे में वर्णन करते हुए अश्लील होने से स्वयं को नहीं बचा पाते, लेकिन वे अकहानी के दौर के अन्य कहानी लेखकों दूधनाथ सिंह या काशी नाथ सिंह की तरह अश्लीलता के गहन अंधकार में कहानी को जाने से बचा लेते हैं। दूधनाथ सिंह की "छिनाल" और काशीनाथ

सिंह की कहानी "रीछ" के आधार पर यह बात कही जा सकती है। तात्पर्य यह कि उनके ऊपर अकहानी का प्रभाव देखा जा सकता है, इसका प्रभुत्व नहीं। ज्ञानरंजन की कहानियों की तीसरी श्रेणी उस समय के युवा वर्ग में मौजूद संत्रास और दिशाविहीनता को सूचित करता है। दरअसल ज्ञानरंजन ने "घंटा" कहानी के माध्यम से इसी बात को दिखलाने का प्रयास किया है। इस कहानी में युवक का स्वतःस्फूर्त विद्रोह परिलक्षित होता है, जो उस काल में संगठित आन्दोलन की अनुपस्थिति और सैद्धान्तिक रूप से कम्युनिस्ट पार्टी में मौजूद ढुलमुलपना व दिशाहीनता का परिणाम है। ज्ञानरंजन अपने समय की वस्तुस्थिति के प्रतिनिधि लेखक हैं।

तात्पर्य यह कि ज्ञानरंजन ने मध्यवर्गीय सीमा में अपने काल की ऐतिहासिकता को अपनी कहानियों में रखने का प्रयास किया है। वे अपने समय से बाहर देख पाने में सफल नहीं हुए हैं, और अपने समय की विभिन्न प्रवृत्तियों से प्रभावित हैं, बावजूद इनके कहानी को एक नये आवेग के साथ प्रस्तुत करने में उनकी महत्वपूर्ण भूमिका दिखाई देती है, और इस रूप में वे हिन्दी कहानी परम्परा को विकसित करने में योग देते हैं।

---------

## द्वितीय अध्याय--

## ज्ञानरंजन की कहानियों का विकासक्रम

ज्ञानरंजन की कहानी यात्रा लगभग एक दशक तक फैली हुई है। उनकी पहली कहानी "मनहूस बंगला" 1959 में छपी और 1971 में अब तक की उनकी अन्तिम कहानी छपी। अभी तक की उनकी अन्तिम कहानी "अनुभव" "धाम" में 1971 में छपी। इन दस वर्षों की कहानी यात्रा में उन्होंने स्वयं को विकसित करने का प्रयास किया। यह प्रयास कथ्य और शिल्प दोनों स्तरों पर हुआ। वैसे उनके इस प्रयास के बारे में वस्तुगत मूल्यांकन करने से कहा जा सकता है कि उनकी कुछ प्रारंभिक कहानियाँ दोनों स्तरों पर ज्यादा प्रभावशाली व प्रासंगिक हैं बजाय कि अंतिम कहानियाँ। इस आधार पर उनके लेखन के विकासक्रम में मौजूद सकारात्मक और नकारात्मक पहलुओं को देखा जा सकता है।

ज्ञानरंजन की विशेष चर्चित कहानियों में "अमरूद का पेड़" ॥1962॥, "फैंस के इधर और उधर" ॥1964॥, "घंटा" ॥1970॥, बहिर्गमन ॥1970॥ आदि हैं। इसके बीच के दौर में उन्होंने प्रेम से संबंधित या दाम्पत्य जीवन को चित्रित करने वाली कहानियाँ लिखीं। ज्ञानरंजन की कहानियों को अगर हम इस पूरे कालक्रम में देखते हैं तो पाते हैं कि ज्ञान की प्रारंभिक कहानियाँ मध्यवर्गीय परिवारों के बिखराव की समस्या को

लेकर चलती हैं जबकि अंतिम दौर की कहानियों में छद्म, बुद्धिजीवियों के दोहरे चरित्र को खोला गया है । बीच के दौर की कहानियाँ इनसे अलग प्रेम की समस्याओं को लेकर चलने का प्रयास करती हैं । इन तीन प्रकार की कहानियों के आधार पर ज्ञानरंजन की कहानियों के विकासक्रम को रेखिक दृष्टिकोण से देखें तो साफ तौर से एक "यू" आकार का "वर्ष" बनता दिखाई पड़ेगा । तात्पर्य यह कि कथ्य व शिल्प के दृष्टिकोण से उनकी प्रारंभिक व अन्तिम कहानियों में विकास के पहलू स्पष्ट हैं जबकि बीच के दौर की कहानियाँ कमजोर स्थिति में हैं ।

ज्ञानरंजन की प्रारंभिक कहानियों मेंहोने के बावजूद "अमरूद का पेड़" एक बहुचर्चित, प्रभावशाली और प्रासंगिक कहानी है । दस वर्षों के लेखन के अनुभवों को समेटते हुए लिखी गई उनकी एक अन्य कहानी "घंटा" बहुचर्चित और प्रासंगिक होने के बावजूद एक हद तक संकीर्णता का शिकार है, और इसके द्वारा सामाजिक चिंतन की कोई ठोस व टिकाऊ स्थिति नहीं दिखाई देती । यह सचमुच आश्चर्य की बात है कि दस वर्षों के लेखकीय अनुभव को जीने वाला कहानीकार समाज की वास्तविकताओं को सचेत ढंग से विश्लेषित नहीं कर पाता, और निष्कर्ष में स्वतः स्फूर्तता से परिचालित हो जाता है । "घंटा" कहानी में कहानीकार छद्म बुद्धिजीवियों के खिलाफ स्वतःस्फूर्त संघर्ष को लक्षित करता है, और इस प्रकार कहानी को निष्कर्षतः कमजोर कर देता है । दस वर्ष पहले लिखी गई कहानी "अमरूद का पेड़" में इसके बिल्कुल उलट स्थिति

DISS
O,152,3,N2,9Y:9
152M6 TH-1937

है, और इस कहानी में कहानीकार सामाजिक वास्तविकताओं को चित्रित करने में गंभीरता का परिचय देता है, और इनके खिलाफ सचेत, टिकाऊ, सार्थक संघर्ष की दिशा चिन्हित करता है । "अमरूद का पेड़" शीर्षक कहानी अंधविश्वास के खिलाफ खड़ी होती है, और अंधविश्वास के विभिन्न कारकों या कारणों को व्याख्यायित करते हुए एक सार्थक निष्कर्ष पर पहुँचने का प्रयास करती है । यह निष्कर्ष है -- व्यवस्था के प्रति गुस्सा का । कहानीकार ने व्यवस्था के प्रति विरोध की जरूरत को बताते हुए ऐसे विरोध को स्वीकार किया है जिसका संस्कार हो, और जिसे पोसा जा सके । तात्पर्य यह कि अंधविश्वासों व बुराइयों के खिलाफ ज्ञानरंजन संगठित विरोध के पक्ष में हैं । "बंटा" कहानी में इस बात को वे भूल जाते हैं, और असंगठित, स्वतःस्फूर्त विरोध के पक्ष में अपनी कहानी को सामने लाते हैं । संगठित विरोध से असंगठित विरोध के पक्ष में ज्ञानरंजन का स्थान परिवर्तन उनकी कहानी की चेतना के विकासक्रम के साथ जुड़ा प्रश्न है । उनके दस वर्षों के लेखन का इस प्रकार अगर लेखा जोखा लिया जाय, तो पाते हैं कि आरंभ का ज्ञानरंजन अपने विश्लेषण में ज्यादा व्यावहारिक और व्यापक दृष्टिकोण को अपना रहा है, और मिलमिलाकर ज्यादा गंभीर है । बाद की कहानियों में उसकी यह गंभीरता घटती गई है, और कहीं-कहीं तो भौंडेपन की सीमा में प्रवेश कर गई है ।

बावजूद इनके यह कहा जा सकता है कि अपने दस वर्षों के लेखन में ज्ञानरंजन ने कहानी को अनुभवों के नये पक्षों से जोड़ने का प्रयास किया,

और पूरी कहानी विधा को वैयक्तिक व सामाजिक अहसासों के विभिन्न पहलुओं से अवगत कराया। दस वर्षों की उनकी कहानियाँ लगातार संवेदनाओं व अहसासों के स्तर पर सामाजिक तथ्यों को करीब से व गहराई से जाँचने का प्रयास करती हैं, और मध्यवर्गीय दायरे में जीवन के यथार्थ को प्रस्तुत करती हैं।

ज्ञानरंजन के अनुभव और अहसास निहायत निजीपन के साथ हमारे पास खुलते हैं। अनुभवों की परत दर परत में कलाकार का व्यक्तित्व समाहित लगता है, और ऐसा प्रतीत होता है कि वह अपने व्यक्तित्व की परछाइयों तले एक बड़े मध्यवर्गीय दायरे के साथ व्यापक जनसमुदाय को आमंत्रित कर रहा है। कहानीकार के इस आमंत्रण को मध्यवर्गीय या व्यापक जनसमुदाय का कितना बड़ा हिस्सा स्वीकार कर रहा है इसके बारे में प्रश्न हो सकता है, पर इसमें दो मत नहीं कि ज्ञानरंजन अपनी कहानियों को बड़े दायरों में फैलाने की कोशिश करते हैं। वे अपनी कहानियों को इस प्रकार व्यापकता प्रदान करने की कोशिश करते हैं, और अपनी समझदारी में मध्यवर्गीय अहसास को सामाजिक अहसास में बदलने के दृष्टिकोण से परिचालित हैं। इस प्रकार उनका निजत्व एक बड़े फलक पर उतरना शुरू कर देता है। ज्ञान की कहानियों में प्रायः इस प्रक्रिया की एक धाराप्रवाहिकता देखी जा सकती है।

ज्ञान की कहानियाँ जहाँ वैयक्तिकता की सीमारेखा को तोड़ कर विस्तार ग्रहण करने लगती हैं, वहाँ वे तेजी से एक नई आधारभूमि की

और बढ़ना शुरू कर देती हैं । इस बयान से वैयक्तिक विक्षोभ, घुटन, पीड़ा, संत्रास को एक सामाजिक महत्व व दिशा मिलता दिखाई पड़ता है ज्ञान अपनी पूरी वैयक्तिकता को इस प्रकार सामाजिक दबावों के साथ शामिल करते हैं, और क्या निज क्या दूसरे का भाव एकाकार होने लगता है ।

ज्ञान जीवन पर खीझते नहीं, इसकी दुरावस्था के बारे में पानी पी पीकर लोगों को नहीं कोसते, वरन दुरावस्था के तमाम उपकरणों के खिलाफ पैनी दृष्टि रखते हैं, और इनके प्रति व्यंग्यात्मक रुख रखते हुए इनके खात्मे के औचित्य को कहते प्रतीत होते हैं । "अमरूद का पेड़" शीर्षक कहानी जीवन के एक नये दर्शन को व्यक्त करता है । यह दर्शन है, पुरातन मान्यताओं, रूढ़ियों, अंधविश्वासों को तोड़कर जीने का दर्शन । इस दर्शन के प्रति परिवार व पास-पड़ोस के लोग विरोधी हैं, और उन्हें परिवार की कुशलता अंधविश्वास के सहारे ही सुरक्षित लगती है । कहानीकार इन दो दृष्टिकोणों को सामने रखते हुए सामाजिक विकास की सीमाओं पर भी अंगुली रखता चलता है । वह अपनी माँ और पिताजी के बारे में व्यंग्य के भाव से कहता है कि उसके माता-पिता शायद प्रगतिशील हों, क्योंकि उन्होंने माहात्मा जी के सत्याग्रह आन्दोलन में भाग लिया है, आदि-आदि । कहानीकार इस तथ्य को कहकर यह बताने की कोशिश करता है कि स्वतंत्रता आन्दोलन के बाद भी अंधविश्वास व रूढ़िवादिता की जड़ें मजबूत हैं । कहानीकार बड़े

ही संयत भाव से व पूरे आत्मविश्वास के साथ अपने अभीष्ठ को सामने रखता है, और पाठक को बड़ी खूबी के साथ अहसास करवा पाता है कि वह जो कह रहा है, उसमें वजन है ।

ज्ञान में अंधविश्वासों व रूढ़ियों को समझने व उसे तमाम लोगों के बीच विचार के लिए रखने की शालीनता है । वह माँ-पिता के अंधविश्वासों के प्रति निरुद्देश्य गुस्सा नहीं करता । उसे माँ-पिता के दकियानूसीपन पर सिर पीटने या बाल नोचने का आभास नहीं होता । वह बस विभिन्न परतों में मौजूद उन मनोवैज्ञानिक संवेगों के साथ वास्तविकताओं को जोड़ता चला जाता है, जिसके कारण पारिवारिक कलह, झगड़े, दुरावस्था, बीमारी के कारण के रूप में अमरूद के पेड़ को मान लिया जाता है । और वह नानकार फलता-फूलता अमरूद का पेड़ कटा दिया जाता है । आज भी भारत के निपट गाँवों में इस तरह की घटनायें देखने, सुनने को मिल जाती हैं । ज्ञान इन घटनाओं के तह में मौजूद संवेदनाओं को पहचानता है, और उनका विनम्रतापूर्वक विरोध करता है । इस विरोध में कहीं उच्छृंखलता या अवमानना का भाव नहीं है । वह इस बात को महसूस करता है कि नई पीढ़ी व पुरानी पीढ़ी के बीच एक खाई है, और इसे पाटने के लिए नई पीढ़ी को विशेष प्रयास करना है ।

ज्ञान हमेशे सजग और चौकन्ने पात्र की भूमिका में नजर आते हैं । उनकी कहानियों के मुख्य चरित्रों में एक दबंगपन का भाव नजर आता

है । ज्ञान के मुख्य चरित्र सिर झुकाकर सड़क पर अनमने भाव से चलने वाले नहीं हैं कि किसी को भी दया आ जाय । वे दया के पात्र नहीं हैं, यद्यपि वे परेशानियों से ग्रस्त हैं । "गोपनीयता" ।1964। कहानी में पाशा एक छोटा सा बालक है, चंचल और प्यारा । घर के सारे लोग उससे छिपाते हैं कि उसकी जीजी बगैर शादी के गर्भवती हो गई हैं, पर बच्चा घर की गोपनीय स्थितियों से आगाह हो जाता है । वह प्रश्न पर प्रश्न करता जाता है, और अंत में पिता द्वारा तमाचे खाता है । तमाचे खाने के बाद बच्चा चुप नहीं बैठता । वह अपमानित महसूस करता है कि बिना वजह वह पिट गया, और जीजी के बारे में महरी से सुनी हुई सारी बातें उगल देता है । वह साफ कहता है, और कुलमिलाकर उसके शब्दों में चुनौती का भाव है ---

"महाराजिन को कोई कुछ नहीं कहता ....... कह रही थी, उन्हें चोट चोट कुछ नहीं लगी थी । वे कलकत्ते अपने पेट का कीड़ा गिरवाने गई थी "। एक अबोध बालक के मुँह से सच का एक टुकड़ा उगलवादेने के पीछे यह बात निहित है कि जिस सचाई को सामाजिक मान-मर्यादा के भय से ढँकने की कोशिश की जा रही है, दरअसल वह एक खुला सत्य है, और उसे स्वाभाविक रूप से सारे लोग जानते हैं ।

सच को किस प्रकार धारदार बनाकर पेश किया जाय यह कला ज्ञान को मालूम है । वे अंधविश्वासों, छद्म नैतिकता के खिलाफ जिस साहस के साथ लिखते हैं, राजनीतिक व्यक्तित्वों के बारे में भी उसी

आवेश के साथ कटाक्ष करते हैं । ज्ञान का कहानी लेखन नेहरू का समकालीन है । नेहरू बच्चों के चाचा के रूप में बहुचर्चित किये जाते हैं । तमाम प्रचार माध्यमों से उन्हें बच्चों का हमदम घोषित किया जाता है । परन्तु नेहरू चाचा के प्यारे बच्चे बीमारी, कुपोषण, अशिक्षा और तमाम यंत्रणाओं के शिकार हैं । फिर भी बच्चों में एक भ्रम है ----

"नेहरू चाचा आयेंगे
वाचकेट की जेब में
चाकलेट लायेंगे ।"

और बच्चों के इस भ्रम के प्रति कहानीकार सचेत है व वह इस भ्रम को एक झटके से तोड़ देने का आग्रही है -- "मुझको लगा कि मेरे कानों पर एक व्यंग्यात्मक हाइकू टकरा रहा है ।" ।गणजीवी-1964। । यह किसी व्यक्ति के द्वारा खिसियाहट में कह दिया गया कथन नहीं है, वरन यह एक ऐसे नौजवान का अहसास है जो क्लर्क बनने की प्रतीक्षा में पेंशनयाफ्ता पिता के रुपयों का व्यग्रता से इंतजार कर रहा है । यह एक पूरे नौजवान तबके का राजनीतिक नेतृत्व के प्रति मोह भंग की भी अभिव्यक्ति है ।

ज्ञान का प्रेम संबंधों के प्रति न तो कोई रूमानी आग्रह है, और न ही वे इसके बारे में कोई भ्रम के शिकार हैं । वे प्रेम संबंधों की शुरू-आत मध्यांतर व इसके दुःखद अंत के प्रति पूर्णतः वाकिफ हैं । वे प्रेम के

बारे में कटु सच्चाइयों को उद्घाटित करते हुए इसे जीवन और समाज के यथार्थ से जोड़ते हैं । उनके विश्लेषण में प्रेम कोई आदर्शवादी, स्वप्निल प्रक्रिया नहीं बल्कि इसका एक निश्चित समाजशास्त्र है । हमारे यहाँ प्रेम संबंधों को लेकर काफी "पवित्र" धारणाएँ पेश की जाती हैं ।। अलौकिक ऐसी कहानियाँ और किस्से गढ़े गये हैं जो प्रेम को आर्थिक सामाजिक सचाइयों से अलग छिटक जाते हैं, और निष्पक्ष जागरूक विश्लेषण के आधार पर अपनी सार्थकता भी देते हैं । ज्ञानरंजन प्रेम के तर्क को समाज के तर्क के आधार पर कसते हैं, और इस कोशिश में जीवन की बारीकियों, इसके अन्दर मौजूद विकृतियों, कायरपन, धूर्तता आदि को बांचते हैं ।

ज्ञान की नायिका किसी पारंपरिक नारी चरित्र को अपने अंदर समेटे नहीं होती, और न ही उसके व्यवहार किसी कृत्रिम विचार से निर्देशित होते हैं । उसकी नायिका प्रेम के पक्षों को सामाजिक दबावों के साथ अहसास करती है, और उसके सामने इस प्रकार प्रेम के नाम पर कोई भावुकता का संकट नहीं होता । ज्ञान की नायिका परिस्थितियों के थपेड़ों से पूर्णतः वाकिफ और उनसे भरसक जूझने का प्रयास करती है । इस प्रयास में उसे कहीं सफलता भी मिलती है, और कहीं समझौता कर वह परिस्थितियों के आगे घुटने टेक देती है । नायिका का परिस्थितियों के आगे इस प्रकार घुटने टेक देना नायक को बेमानी और प्रेम के साथ धोखाधड़ी प्रतीत होती है, और वह खीझता, गुस्से करता, नायिका को कोसता प्रेम के गणित से अपने को निष्कासित अनुभव करने लगता है ।

प्रेम की यह दुःखद परिणति वैसे प्रेम योजना के प्रति एक विरक्ति सी पैदा करती है, परन्तु अन्ततः यह आदमी को संवेदनाओं के स्तर पर झकझोरती चली जाती है। इसके अन्तर्गत संत्रास या घुटन की एक स्थिति दिखाई पड़ सकती है, परन्तु अगर इसे सही दिशा की ओर चिन्हित किया जाय तो, आदमी को एक बेहतर जिन्दगी तलाशने की ओर ले जाया जा सकता है। एक ऐसी जिन्दगी जिसमें जीवन व समाज की वास्तविकता प्रेम-संबंधों के स्वस्थ विकास को स्थापित करती हो।

ज्ञान कहानियों की नैतिकता के बारे में बहुत सचेत नहीं लगते। उनमें एक खुलापन का भाव है। वे कहानी कहने में "सबकुछ" कह देने के आदी लगते हैं। इसे इस रूप में भी कहा जा सकता है कि वे वास्तविकताओं को कहानियों में समेटने व गढ़ने में कभी-कभी छाँटने-पछोरने की क्रिया को भूल जाते हैं, और घटित बातों को रखते चले जाते हैं। वे इस प्रयास में परहेज नहीं करते, और इस बात की जरा भी परवाह नहीं करते कि इससे कहानी की सेहत पर क्या फर्क पड़ रहा है। ज्ञान की इस प्रवृत्ति की आलोचना के साथ इस बात का भी अहसास किया जा सकता है कि ज्ञान इन स्थितियों को कहानियों में रखने के पीछे किसी रुग्ण मानसिकता के शिकार नहीं हैं। यह लगता है कि कहानी को अधिक से अधिक विश्वसनीयता दिलाने की कोशिश में वे लगे हैं, और इस ख्याल से चरित्रों के मुताबिक वातावरण को वे "पेंट" कर रहे हैं। इस संदर्भ में हम "छलाँग", "रचना-प्रक्रिया", या "दाँपत्य" आदि कहानियों को उदाहरणार्थ रख सकते हैं। वैसे अपनी इस कोशिश में

कहाँ तक सफल हैं इसके बारे में प्रश्नचिन्ह लगाये जा सकते हैं।

ज्ञानरंजन की कहानियाँ किसी सीधी-समतल आधारभूमि की तलाश नहीं करती बल्कि जीवन की विपन्नताओं, विसंगतियों, विडम्बनाओं को खोजती हुई अनुभवों की घाटियों, कन्दराओं से गुजरती चलती हैं। इन अनुभवों के साथ जीवन का कटु और मधुर श्याम व धवल पक्ष उघड़ते चले जाते हैं। उनकी रचनात्मक द्वन्द्वात्मकता जीवन को सच और झूठ के पाटों का सक्रिय निरीक्षण करती चलती हैं, और इसके साथ परिवेश की सजीवता पाठक की संवेदनाओं के साथ एकाकार होने लगती है। लेखक तेजी से अपने दृष्टिकोण का विस्तार करता चलता है, और कहानी नये आयामों को ग्रहण करती चली जाती है। कहानी की सार्थकता इस व्यापकता के साथ साबित होने लगती है। कहानी दर-असल किसी घटना के वर्णन का नहीं, बल्कि इसके पुनर्सृजन का हिमायती है, और इस सत्य के साथ जुड़ी है कि एक घटना कितने अधिक पर्तों पर खुलती है, व कितनी तीव्रता के साथ लोगों की चिन्तन प्रक्रिया व उनके भावों को झकझोरती है। ज्ञान अपनी कहानी में जीवन के सत्यों को न सिर्फ उद्घाटित करते हैं, बल्कि इनके प्रति पाठक का लगाव या विलगाव का भाव पैदा करते हैं। वे घटनाओं-परिघटनाओं के कुशल, कलात्मक चित्रण के माध्यम से पाठक के चिंतन के साथ जुड़ जाते हैं और फिर उसके चिंतन को परिष्कृत करने, उसे आन्दोलित करने का प्रयास करते हैं।

ज्ञानरंजन नवीनता और पुरातनता के बीच फर्क करते हैं। वे अपने आसपास के परिवेश, जीवन-व्यवहार व सामाजिक यथार्थ के माध्यम से नया और पुराना के बारे में खुलते चले जाते हैं। उनमें नया को नया और पुराना को पुराना कहने में कोई झिझक नहीं है। वे नया और पुराना को पूरे साक्ष्यों के साथ विभाजित करते चलते हैं। उनमें पुराने के प्रति व्यंग्य भाव दिखता है, और नया के प्रति विशेष आग्रह। लेकिन पुराने के प्रति इस व्यंग्यभाव को वे किसी दुराग्रह के रूप में परिवर्तित नहीं होने देते। उनका इरादा कुछ अलग है। वे पुरानेपन की कमजोरियों से लोगों को परिचित कराते चलते हैं, और चिंतन व व्यवहार के क्षेत्र में नवीनता की माँग को प्रकाशित करते हैं। इस नया और पुराना के द्वैत के साथ ज्ञान की कहानियाँ संबंध स्थापित करती चलती है। वह नया और पुराना के बीच सार्थक व सजीव जीवन पद्धति का विकास करना चाहते हैं। नया के पक्ष में उनका आग्रह होते हुए भी वे नवीनता की कमजोरियों के प्रति भी सतर्क हैं। ज्ञान की यह सतर्कता उनकी कहानियों में एक नये जीवन-विकास को रेखांकित करती है, और लोगों के लिए जीवन जीने के कुछ नये तर्क प्रदान करती है। "पिता" ॥1965॥ शीर्षक कहानी में ज्ञान ने पिता के पुराने विचारों, आग्रहों को रखा है। उन्होंने इस कहानी में यह बताने की कोशिश की है कि पिता अपने पुराने विचारों के कारण तमाम कष्ट भुगत रहे हैं, फिर भी वे खुश हैं। उन्हें इसी बात से खुशी है कि वे प्राचीनता की सुरक्षा में लगे हैं, और तमाम लोग इस प्राचीनता को त्याग चुके हैं। लेकिन पिता का प्राचीनता प्रेम आचारों-व्यवहारों की एक रूढ़ धारा का निर्माण करता है, और भविष्य के विकासशील समाज से बिल्कुल कटा है। ज्ञान ने

बड़ी खूबी के साथ यह बताने की कोशिश की है कि जीवन के प्रति पुरानपंथी विचार कष्टकर व दुःसाध्य हैं, फिर भी लोग अपने प्राचीन प्रेम के कारण बिना वजह इस कष्ट को "झेल" रहे हैं। वे बाजार से फल-सब्जी खरीदने के विरोधी हैं, वाश बेसिन में हाथ नहीं धोते, पंखे का हवा नहीं लेते, आधुनिक दर्जियों के पास कपड़े सिलवाने से भड़कते हैं, आदि - आदि। दूसरे शब्दों में विकास के तमाम चिन्हों व सुविधाओं से वे विरोध रखते हैं, और पुराने व्यवहारों को जीते हैं। ज्ञान इस कहानी में पिता के प्रति व्यंग्य, क्रोध या खीझ का भाव प्रदर्शित नहीं करता। वह एक-एक स्थितियों को गिनता चलता है, और व्यावहारिक तथ्यों के माध्यम से साबित करता है कि पिता के व्यवहार पुरानी पीढ़ी का प्रतिनिधित्व करते हैं, और इनसे सामाजिक विकास की सुविधायें रुद्ध होती हैं।

ज्ञानरंजन सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक दबावों को पूँजी के विराट तंत्र के छद्म के साथ जोड़ कर देखते हैं, और आदमी के व्यवहारों पर इनके द्वारा पड़ रहे प्रभाव को उधेड़ देते हैं। इसके द्वारा वे व्यक्तियों के असली व नकली रूपों को लोगों के सामने बिना झिझक खोल देते हैं। इससे आदमी के सम्बन्धों में आयी विकृतियाँ व बनावटीपन सामने आ जाते हैं। "घंटा" कहानी में वे अपने "मैं" को एक ऐसे चरित्र के रूप में पेश करते हैं, जो एक छल प्रपंच से पूर्ण तंत्र के खिलाफ विद्रोह करता है, और स्वयं को किसी का घंटा बनाने से इन्कार कर देता है। इसी प्रकार"बहिर्गमन" ॥97॥ कहानी में कहानीकार ने भारतीय समाज की उस मानसिकता पर चोट किया है जो पश्चिमी सभ्यता की अंधी नकल में लगी हैं। "घंटा" कहानी

में कहानीकार ने छद्म बुद्धिजीवियों के चरित्र की खबर ली है, और समाज के एक विशेष वर्ग में फैली विकृतियों को रखा है। ज्ञानरंजन के समय कुंदन सरकार सरीखे खोखले बुद्धिजीवियों की संख्या तेजी पर थी, और ये बुद्धिजीवी अपने व्यवहार में जनविरोधी थे, परन्तु दिखावे के लिए वे जनप्रेमी बनने का दावा पेश करते थे। विदेशी शराब, कीमती सिगरेटें, अमीरों के ऐशगाह अड्डे उनके लिए प्रिय थे, और लोगों की आँखों में धूल झोंककर ये बुद्धिजीवी बनने, किफायत पसन्द कहलाने, दुःखदर्द का अनुभवी होने का ढोंग रचाते। वैसे ऐसे बुद्धिजीवियों की अभी भी कमी नहीं हैं, और इसलिए ज्ञान की कहानी प्रासंगिक भी है। ऐसे बुद्धिजीवी के प्रति लेखक में विरोध-भाव है, और वह उनके खिलाफ विद्रोह का हिमायती है। वैसे जिसप्रकार इस विद्रोह को कहानी में दिखाया गया है, वह आक्रामक अनियोजित, नाटकीय व बम्बइया फिल्मों के तर्ज पर लगता है। कहानी का "मैं" कुन्दन सरकार का "घंटा" बनने से इन्कार करता है, अमीरों के ऐशगाह में सोडावाटर की बोतलें तोड़ता है, और पिटकर घायल "पैट्रोला" चला आता है। विरोध का यह तरीका कुन्दन सरकार को जड़ से समझने और उसके खिलाफ व्यवस्थित गुस्सा संचालित करने में समर्थ होने के बजाय स्वतःस्फूर्त क्रोध से प्रभावित है, और ऐसे क्रोध का अंतिम रूप से कोई अर्थ नहीं होता। इसी प्रकार "बहिर्गमन" कहानी में एक व्यक्ति में विदेशी वस्तुओं के प्रति लालच को दिखलाने का लेखक का उद्देश्य सिर्फ इतना नहीं है कि इस प्रकार की लालच अच्छी नहीं है। वह चरित्र के माध्यम से भारत में मौजूद उस मान-सिकता पर चोट करना चाहता है जिसके कारण लोग स्वदेशी को भूलकर फैशनपरस्त हो गये हैं। इस प्रकार के विरोध के पीछे कहीं न कहीं कारण के रूप में ये बात आ जाती है कि आजादी के संघर्ष को लोग भूल गये

हैं । लेखक लोगों की इस मानसिकता के ऊपर चोट करता है, और प्रकारान्तर से यह स्थापित करने की कोशिश करता है कि आजादी के लिए जनता का किया गया महान संघर्ष, विदेशी चीजों व मानसिकता के प्रति तीखा नफरत लुप्त होता चला गया है, और यह स्थिति झिलमिलाकर एक परतंत्र संस्कृति के हाथों लोगों को बांधने के लिए मजबूर कर रही है । समझने की बात है कि यह सब जनता की भूलों के कारण हो रहा है या शासन कैसने वाले लोगों की विदेशी प्रभुओं के प्रति समर्पण की नीति के एवज में ।

ज्ञान अपनी कहानियों में एक दिलचस्प किस्सा गो की तरह व्यवहार करते हैं । किसी भी कहानीकार की ऊँचाइयों का इस तथ्य से पता लगता है कि वह किस्सागोई में कितना काबिल है । ज्ञान अपने कहानीकार के इस चरित्र को बड़ी खूबी के साथ निभाते हैं । उनकी कहानियों में छोटी-छोटी क्रियाओं, घटनाओं को इसप्रकार रखा गया है कि उनमें रोचकता पैदा हो गई है, और वे सुपाठ्य हो गयी हैं । वे अपनी कहानियों को जीवन के इर्द-गिर्द तलाशते हैं, और इसे कहने के लिए किसी सूत्र का सहारा लिये बगैर सचाइयों को तलाशते व गढ़ते चले जाते हैं । इस कला के द्वारा जीवन के आसपास पड़ी वास्तविकतायें संवेदना ग्रहण करने लगती हैं, उनमें अर्थ निकलने शुरू हो जाते हैं, और फिर वे तेजी के साथ हमारे चिंतन में पैठ जाती हैं । इससे वास्तविकताओं के प्रति सहज आकर्षण नहीं होता बल्कि उन वास्तविकताओं की कमजोरियों व खूबियों से साक्षात होता है, और अंततः यथार्थ

निखार के साथ स्पष्ट होता है । यह यथार्थ के प्रति लोगों की चेतना को विकसित करता है, और इसे पुष्ट करने की प्रेरणा प्रदान करता है ।

ज्ञान अपनी कहानियों में कुछ प्रभावशाली, चुभनेवाले "कमेंट" करते चलते हैं । ये "कमेंट" कहानी को चुस्ती प्रदान करने के साथ ही अपने प्रहार बिन्दु को खोज लेते हैं, और ठोस रूप से चोट करते हैं । पूरी कहानी में ये "कमेंट" एक सकारात्मक भूमिका में खड़ा होते हैं, और कहानी को तेजी से आवेग प्रदान करते हैं । इस प्रकार एक तरफ जहाँ इन टिप्पणियों से कहानी की प्रौढ़ता परिलक्षित होती है, वहीं दूसरी तरफ इनकी उपयोगिता कहानी को हाड़-माँस युक्त ढाँचा प्रदान करने में भी होती है । ज्ञान का कहना है ........ "नई चीजें यूँ ही बनती हैं । जैसे अमरूद का पेड़ हमलोगों के बीच अपशकुन के आरोपों को नष्ट करता हुआ धीरे-धीरे बना और वह अब पूरे परिवार का एक खूबसूरत हिस्सा हो गया है ..... ।अमरूद का पेड़" - ।1962। । ज्ञान का यह कथन एक पूरी निर्माण प्रक्रिया की धारणा को व्यक्त करता है, और दो तत्वों के बीच मौजूद टकराहट के परिणाम से उत्पन्न किसी नूतन तत्व को रेखांकित करता है । अक्सर नयी चीजों के जन्म के पीछे पूरी पृष्ठभूमि काम करती है । और यह पृष्ठभूमि है नये व पुराने के बीच संघर्ष की पृष्ठभूमि । यानी विनाश में सृष्टि के बीज छिपे हैं ।

अंधविश्वासों, रूढ़ियों, पुरातन - ग्रंथियों का प्रतिगामी शक्तियों के ध्वंस में ही नई शक्तियों व प्रगतिशील व्यवहारों विचारों का जन्म होता है। इस बड़े और महत्त्वपूर्ण सत्य ने अमरूद के पेड़ के माध्यमसे लेखक ने दो पंक्तियों में कुशलता से कह दिया है। इसीप्रकार उनके एक अन्य कथन को हम देख सकते हैं ----

"जहाँ तक मेरी प्रेमिका का प्रश्न है, वह बड़े शहर की लड़की थी। बड़े शहर की लड़कियों के साथ एक खास बात यह होती है कि उनका सतीत्व अगर कोई चुरा ले या लूट ले जाय तो उन्हें परेशानी या अफसोस नहीं होता ......" (रचना-प्रक्रिया -- 1969) ।

कहानीकार बड़े ही साहस के साथ बड़े शहरों में आधुनिकता के प्रवेश को इन शब्दों में व्यक्त करता है। इस बात में निश्चित रूप से दम है कि शहरों के जीवन में एक खुला-पन है, और इसमें कुंठायें व व्यावहारिक पिछड़ापन खत्म होने लगता है। इस संदर्भ में यौन संबंधों के बारे में सोच में खासा फर्क पड़ता है, और सतीत्व रक्षा संबंधी स्त्रियों की धारणा खंडित हो जाती है। ज्ञान इस सचाई को इस "कमेंट" के

द्वारा कह रहे हैं, और उनके इस कथन में व्यंग्य भी है। इस व्यंग्य में इस प्रकार की यौन स्वतंत्रता के नकारात्मक पहलुओं को भी अभिव्यक्ति मिलती है।

ज्ञान रंजन समाज में मौजूद "भद्रता" की प्रवृत्ति पर चोट करते हैं। यह "भद्रता" की प्रवृत्ति दरअसल और कुछ नहीं समाज के एक खास हिस्से के उस व्यवहार को केन्द्रित करती है जो प्रगतिशीलता के नाम पर अधःपतन का शिकार है। ऐसे लोग ऊँचा बोलते हैं, सिद्धान्तों पर दिन - रात जाया करते हैं, दिखावे में जन - भक्त बन जाते हैं, और छद्म जीवन जीते हैं। ऐसे लोगों के समक्ष सामान्य आदमी की स्थिति बिल्कुल "विपन्न" है। और इस विपन्नता की प्रतिक्रिया उस पर उल्टी दिशा में होती है। इसी बात को ज्ञानरंजन कहते हैं ---

"हमारी नागरिकता एक दुबले हाड़ की तरह किसी प्रकार बची हुई है .......... मुझे दिखाई देता है कि भद्रता प्रगति कर रही है, और इस बीच उसका रत्तीभर

भी बिगाड़ नहीं हुआ है, तब मैं लम्बा सोता हूँ, भो - रिन्हो के गलियारों में घूमता हूँ, कोका - कोला पीता हूँ, और हैला हैलो पैद्रोला के गोल मार जाता हूँ ।"[1]

ज्ञानरंजन की कहानियाँ इस प्रकार एक विकास प्रक्रिया को रेखांकित करती हैं । ज्ञान अपनी कहानियों में विचारों के स्तर पर एक परिवर्तन व विकास को परिलक्षित करते हैं । यह विकास एक सीधी रेखा में भले दिखाई न पड़े, परन्तु यह कहा जा सकता है कि चिन्तन के स्तर पर ज्ञान अपने समय के विभिन्न क्रियाकलापों को अपनी कहानियों के माध्यम से अभिव्यक्त कर रहे थे, और वे समाज में मौजूद विभिन्न सन्दर्भों, व घटनाओं - परिघटनाओं के माध्यम से मध्यवर्गीय जीवन के व्यवहारों में शामिल विभिन्न कम-जोरियों का आलोचनात्मक मूल्यांकन कर रहे थे । इस

---

1. घंटा ---

आलोचनात्मक मूल्यांकन के बारे में ज्ञानरंजन का व्यवहार एक मुखर कहने वाले व्यक्ति जैसा है, और वह मध्यवर्गीय जीवन की कमजोरियों के प्रति निर्मम है। ज्ञानरंजन की इस प्रवृत्ति में लगातार वृद्धि देखी जा सकती है, और इसका अंत मध्यवर्गीय जीवन के छद्म के प्रति स्वतःस्फूर्त "विद्रोह" के रूप में रेखांकित किया जा सकता है ।

---

# तृतीय अध्याय

## ज्ञानरंजन की कहानियाँ : जीवन के यथार्थ और समस्यायें

ज्ञानरंजन की कहानियों में जीवन के यथार्थ पक्ष उभर कर आते हैं । किसी भी रचनाकार की रचनात्मक परिपक्वता और उपलब्धि का यह एक सूत्र है । कला की कोई भी विधा यथार्थ की ठोस जमीन से रंग-गंध पाती और निखरती है । यथार्थ के प्रति कला का लगाव कला को न केवल निखार देता है, प्रत्युत उसे सामा-जिक संदर्श भी प्रदान करता है । कला की श्रेष्ठता जन-जीवन के यथार्थ के साथ जुड़ाव की निकष पर ही प्रमाणित है । ज्ञानरंजन की कलात्मक उपलब्धि वास्तविकताओं के साथ के साथ तलाशी गई है, और कलाकार ने इसके लिए भरपूर प्रयास भी किया है । वैसे इस प्रयास की सीमायें भी दिखाई पड़ती हैं जिनका एक आलोचनात्मक मूल्यांकन रखा जा सकता है ।

ज्ञानरंजन की कहानियाँ जीवन में झाँकने और किसी उपयुक्त द्वार से इसमें उतरने की कोशिश करती हैं । यह कोशिश किसी अलौकिक घटना-परिघटना के तत्व तलाशने के उद्देश्य से संचालित न

होकर जीवन की कमजोरियों या इसकी विशेषताओं को ढूँढ़ निकालने और इसके आधार पर सचाई को उद्देश्यपूरक ढंग से स्थापित करने के इरादे से हैं । ज्ञानरंजन तथ्यों के माध्यम से जीवन के सुरुचिकर पक्ष को खोजने का प्रयास करते हैं, और इसके द्वारा तमाम लोगों को अपनी बात कहने की कोशिश करते हैं । एक कहानीकार का यथार्थ के प्रति यह एक सार्थक लगाव है ।

ज्ञान यथार्थ को खोजने के लिए गली-कूचों में नहीं मँडराया करते, और न ही इसके लिए वे किसी बड़ी यात्रा की कोशिश करते हैं । बस वे जहाँ हैं, वहीं के जीवन के बारे में शुरू हो जाते हैं, जीवन के विभिन्न पर्तों में उतरना प्रारम्भ कर देते हैं, उनकी कहानियों की बहुत सारी वास्तविकतायें उनसे जुड़ी होती हैं, या उनके आस-पास के जीवन संदर्भों, संवेदनात्मक तथ्यों को व्यक्त करती हैं । ज्ञान की प्रारम्भिक कहानियों में "अमरूद का पेड़" है, और यह बिल्कुल छोटी सी बात से शुरू होती है व एक बड़े जीवन-दर्शन में प्रवेश करती है, और अंततः यथार्थ की विजय की सूचना देती है । कहानी अपने आरम्भ के साथ एक तथ्य को उद्घाटित करती है -- बिल्कुल छोटा सा तथ्य -- कि यह अमरूद का पेड़ दरवाजे पर पैदा हो गया है । यह एक बिल्कुल छोटी सी और स्वाभाविक घटना है, जो धीरे-धीरे जीवन के और गहरे यथार्थ में प्रवेश करती हुई आदमी की संवेदनाओं के सच-झूठ के साथ जा लगती है । अमरूद का पेड़ जन्म लेता है, अनदेखे बढ़ता चला जाता है, और अंततः फल देता

शुरू करता है । यहाँ पर दूसरी बात शुरू होती है और वह है कि पश्चिम की तरफ मकान का मुखड़ा होने पर और सामने ही अमरूद का पेड़ रहने पर --"राम राम बड़ा अशुभ होता है ।" यहाँ पर आकर कहानी एक दूसरी धारणा को प्रकट करती है और कहानी अंधविश्वास के साथ यथार्थ के टकराव को व्यक्त करने लगती है । पड़ोसी कन्हैयालाल की बूढ़ी पत्नी द्वारा अमरूद के पेड़ के बारे में कहा गया यह कथन सामाजिक चेतना के स्तर को परिलक्षित करता है । कन्हैयालाल की पत्नी के कथन का काफी प्रभाव पड़ता है । तभी तो घर के लोग -- लेखक के माता-पिता-- अमरूद के पेड़ के बारे में शंकालु हो जाते हैं । और ये माँ- पिता कोई सामान्य माँ-पिता नहीं हैं । इन्होंने सत्याग्रह के दिनों में सत्याग्रह करते हुए जेलों का जीवन जीया है, गांधी जी के जमाने में स्वतंत्रता आन्दोलन में भाग लिया है । घर में बुआ पढ़ने-लिखने में आजन्म क्वाँरी रही हैं, और चाचा ने अन्तर्जातीय विवाह किया है । आश्चर्य होता है, ऐसे परिवार पर अंधविश्वास का भाय व्याप्त है । कहानीकार इस बात को पूरी सहजता से कह रहा है, पर इस सहजता के साथ इतिहास की आलोचना भी छिपी है, एक पूरे आन्दोलन की धारा की गतिरुद्धता व उसके पराभव का संकेत भी मौजूद है । यहाँ कहानीकार ने एक बड़े सत्य का उद्घाटन किया है, और वह है कि आजादी के बाद भी आदमी ने पुराने उसूलों, अंधविश्वासों से अपना पिंड नहीं छुड़ाया है, और लोग अब भी वैज्ञानिक चिंतन पद्धति व विश्वास से अनभिज्ञ हैं । प्राय: यह स्थिति न केवल अपढ़ परिवारों में है, वरन

पढ़े-लिखे लोग भी इसी लीक पर सोचते हैं। घर में किसी को यक्ष्मा होना, बड़े भाई की जुदायी, बहू का घर में बुरा व्यवहार आदि के कारणों को तलाशने के बजाय लोग किसी अशुभ बात की कल्पना कर लेते हैं, और सही समाधान खोजने के बजाय अज्ञानतावश स्वयं के हाथ पर ही कुल्हाड़ी मार लेते हैं। एक भरापूरा अमरूद का पेड़ अगर परिवार में सुख चैन वापस लौट जाने के बहाने अंधविश्वास की बलि दे दिया जाता है, तो यह वैज्ञानिक युग व नई पीढ़ी के लिए एक शोक का कारण है। लेखक ने इसी सच को बताने की कोशिश की है। इस प्रकार लेखक ने शैक्षणिक व सामाजिक पिछड़ेपन को चिंहित किया है, और इसके निदान के लिए ~~कक~~ उपाय खोजने की प्रेरणा दी है। लेखक का विश्वास है कि आने वाली पीढ़ियाँ अंधविश्वासों से मुक्त होगी, वह किसी तकलीफ से सही कारणों को जानेगी और उनको दूर करने का उपाय करेगी। इसीकारण से कहानी के अंत में एक आशा-संकेत दिखाई पड़ता है, और कटे अमरूद की जड़ पर सूरज की रोशनी का एक चकता चमकता होता है। लेखक इस प्रकार यथार्थ के विकासशील रूप को देखने में सक्षम है, और उसमें आने वाले कल के प्रति निष्ठा व विश्वास है।

यहाँ पर एक बात और खुलासा करने की जरूरत समझी जा सकती है। सामाजिक या वैयक्तिक पिछड़ापन को उद्घाटित करना, इससे हो रही परेशानियों व क्षति को रेखांकित करना यथार्थ को रखने का एक सार्थक प्रयास है। इस प्रयास की प्रशंसा निस्संदेह होनी चाहिए। परन्तु यहाँ पर ज्ञानरंजन एक बात भूल जाते हैं, वह है

अज्ञानता व अंधविश्वास को बरकरार रखने वाली शक्तियों को ठीक-ठीक पहचानना । क्या यह सही है कि कन्हैयालाल की पत्नी और कहानीकार के माता-पिता ही अंधविश्वास के लिए दोषी हैं ? कन्हैयालाल की पत्नी और लेखक के माता-पिता दरअसल अंधविश्वास के भुक्तभोगी लोग हैं, परन्तु अंधविश्वास को बचाये रखने और इसे संचालित करने वाली शक्तियाँ कहीं और हैं । लेखक इन शक्तियों के प्रति आश्चर्यजनक रूप से मौन है । लेकिन लेखक का मौन टूटना आवश्यक है, और यह कहा जा सकता है कि अंधविश्वासों के खिलाफ लड़ने वाले सत्याग्रही और गाँधी के अनुयायी भी विभ्रम के शिकार हैं, और इसके लिए किसी न किसी रूप में गाँधी भी दोषी हैं । साथ ही वे लोग भी कम दोषी नहीं हैं जो गाँधी की लाश पर कुर्सी रखे सत्ता के मिष्ठान खा रहे हैं । यानी अंधविश्वासों की जड़ों को बनाये रखने में आज के शासन करने वाली शक्तियों का सर्वहित है । इस बात को कहानी में रखने की जरूरत महसूस की जा सकती है, और इस प्रकार कहानी को यथार्थ के साथ और चुस्त व धारदार बनाया जा सकता है ।

ज्ञानरंजन यथार्थ को पारिवारिक जीवन में खोजने की कोशिश करते हैं । वह बदलती हुई सामाजिक परिस्थितियों और रूढ़ सामाजिक मूल्यों के कारण इनपर पड़ रहे दबावों को रेखांकित करते हैं, और व्यक्ति के ऊपर इनसे उत्पन्न विपरीतियों को हमारे सामने रखते हैं । आज की बदलती स्थितियों में, नयी पीढ़ी में तमाम चीजों के बारे में एक नया मूल्यांकन और आग्रह देखा जाता है । नई पीढ़ी

पुरानी मान्यताओं, बंधनों से आगे बढ़कर सोचने और जीने का प्रयास करती है। इसमें उसकी पूरी ईमानदारी, और स्वाभाविक इच्छाशक्ति काम करती है। परन्तु नये मूल्यों को पूर्णरूपेण सामाजिक स्वीकृति प्राप्त नहीं है, और इसे सम्मानपूर्वक ग्रहण करने की सार्वभौमिकता अनुपस्थित है। इस वजह से नये व्यवहार व आचरण को घूम फिरकर पुरानी मान्यताओं की आलोचनायें व जकड़बंदी को सहना पड़ता है। नई पीढ़ी के यौन व्यवहारों के बारे में यह एक ऐसा यथार्थ है जो स्वीकार किया जाना आवश्यक है।

बदलते समय के मुताबिक पढ़े-लिखे नौजवानों, नवयुवतियों में एक प्रकार का खुलापन आ जाता है, और यह प्राय: यौन-व्यवहार के मामलों में भी अभिव्यक्त होता है। इसमें कभी सामाजिक दबाव व भय के जबर्दस्त प्रभाव के आगे नई पीढ़ी को भयानक त्रासदी सहनी होती है। यह एक कटु यथार्थ है। "गोपनीयता-" शीर्षक कहानी में कहानीकार ने इसी सत्य को उद्घाटित किया है। एक घर की क्वाँरी महिला समाज कल्याण ऑफिसर है। अच्छा स्वभाव, पूरे परिवार में प्रतिष्ठित है। अचानक वह घर लाई जाती है, और घर का पूरा वातावरण गोपनीय हो जाता है, फिर नाटकीय तरीके से उद्घाटित होता है कि वह अवैध रूप से गर्भवती होती है, और इससे पूरे परिवार पर आफत आन पड़ा है। यह पूरा भय एक मध्यवर्गीय चिंता को व्यक्त करता है। सत्य को छिपाकर मान-मर्यादा, झूठे सम्मान को बचाने की चिंता। इस कहानी में

जीवन का स्वाभाविक यथार्थ बड़े ही कलात्मक ढंग से अभिव्यक्त हुआ है, और बदलती परिस्थितियों में नई पीढ़ी पर पुरानी मान्यताओं के कारण पड़ रहे दबावों को अभिव्यक्त किया गया है ।

कहानीकार ने इस कहानी में यह बताने की कोशिश की नहीं की है कि एक पढ़ी-लिखी महिला को अविकसित समाज में अपना जीवन साथी चुनने का में क्या परेशानियाँ होती हैं । जिस जगह हमारा समाज आज आकर खड़ा हुआ है, वहाँ पर पढ़ी-लिखी महिलाओं की एक बड़ी संख्या दिखाई देती है, और इनमें तमाम चीजों के बारे में नये विचार भी विकसित हुए हैं, परन्तु पुरुष-प्रधान समाज अभी भी उसे एक भोग की वस्तु के रूप में मानता है, और मौका मिलते ही उसपर टूट पड़ता है, या उसे ठगने का प्रयास करता है । ठगी व अपमान की शिकार महिला बाद में सतीत्वहरण की अपराधिनी करार दी जाती है, और फिर उसका मुँह दिखना मुश्किल होता है । ऐसी महिलाएँ या तो किसी गुमनाम अँधेरे में गुम हो जाती हैं या फिर जिन्दगी भर सिर झुकाये अपमान के घूँट पीती होती हैं । कहानीकार महिलाओं की इस दयनीय स्थिति को चित्रित करता है, परन्तु ऐसी महिलाओं के बारे में वह आगे कोई रास्ता नहीं दिखा पाता । उसे महिलाओं के शोषण के बारे में उनकी ठगी के बारे में इतना रोष नहीं दिखाई देता जितना उन बंधनों के बारे में जो उसे घर में मौजूद मध्यवर्गीय जीवन मूल्यों के कारण मिले हैं । इस प्रकार उसका प्रहार बिन्दु मध्यवर्गीय जीवनमूल्य या यौन सम्बन्धों के बारे में कमजोर सोच है । यहाँ पर लेखक की इस स्थापना को माना जा सकता है ।

वे इस मामले में यथार्थ को रख रहे हैं । बावजूद इसके उनसे एक सवाल पूछा जा सकता है । वह सवाल है कि महिला समाजकल्याण अधिकारी को क्या क्वाँरी जीवन में गर्भवती होने की इजाजत दी जा सकती है ? अर्थात नई पीढ़ी को क्या उन्मुक्त यौन सम्बन्ध करने की छूट मिल सकती है ? यहाँ इस प्रश्न को गंभीरता से विचारने की जरूरत है, और आधुनिकता के नाम पर उच्छृंखलता को तरजीह न देने का सवाल मौजूद है । किसी भी समाज में प्रत्येक पुरुष स्त्री को अपने जीवन के बारे में निर्णय लेने का अधिकार मिलना चाहिए, पर खुलापन के नाम पर उसे सामाजिक व्यवस्था भंग करने की छूट बेमानी होगी । "गोपनीयता" शीर्षक कहानी यथार्थ के इस पहलू को ध्यान में नहीं रख पाती है । इस प्रकार कहानी में औरत की ठगी व शोषण को चित्रित करने के साथ एक सुस्पष्ट सामाजिक जीवन की धारणा को यथार्थ के साथ जोड़कर रखने की जरूरत है ।

ज्ञानरंजन नौजवानों के बीच मौजूद विक्षोभ व घुटन को भी अपनी कहानी में व्यक्त करते हैं । हमारे देश के नौजवानों के सामने एक अच्छी जिन्दगी जीने का सवाल है । नौजवानों की पढ़ाई-लिखाई का कोई खास मतलब नहीं है । पिता के दुःख-तकलीफों में इजाफा कर वह जैसे-तैसे पढ़ाई करने को मजबूर है । उसे अच्छी किताबें, अच्छा भोजन और एक स्वस्थ जीवन उपलब्ध नहीं है । वह स्वयं पढ़ाई कर पाने में असमर्थ है । उसे अपनी पढ़ाई के लिए पिता पर निर्भर करना पड़ता है । पिता अगर अपनी मुश्किल की कमाई

से उसे मनिआर्डर नहीं करे, तो वह पढ़ नहीं सकता । और इतनी मेहनत-मजदूरी उठाने की कीमत एक क्लर्क बनने की आशा मात्र है । क्लर्क बनाने की मशीन हो गयी है हमारी शिक्षा प्रणाली । ज्ञानरंजन इस प्रकार पढ़े लिखे युवकों में व्याप्त विक्षोभ को वाणी देते हैं जिस समय ज्ञानरंजन कहानी लिख रहे थे उस समय यह विक्षोभ कई छात्र-नौजवान आन्दोलनों में मुखर होकर आया था; और युवकों के जीवन के साथ यह स्थिति अब और भी गंभीर रूप में उपस्थित है । ज्ञानरंजन की कहानी "क्षणजीवी" इस प्रकार नौजवानों के बारे में यथार्थ को व्यक्त करने वाली कहानी है ।

ज्ञानरंजन प्रेम को ऊँचा आंकते हैं । उन्हें अपनी प्रेमिका पर एक विश्वास होता है । वे अपनी प्रेमिका के साथ साहचर्य की आशा रखते हैं । और उसपर तब जब वह प्रेमिका वर्तमान में किसी की पत्नी बन गई हो । कहानीकार इस भ्रम में हैं कि उनकी प्रेमिका उनका ख्याल रखती है, उनकी इच्छाओं का सम्मान करती है । इसलिए वे आशा करते हैं कि पत्र देने के साथ इन्दु उनके पास आ जायेगी, और फिर वे साथ-साथ कुछ दिन रहेंगे, सैर सपाटे करेंगे लेकिन यह आशा एक "दिवास्वप्नी" युवक उस प्रेमिका से कर रहा है जो दूसरे की विवाहिता हो चुकी है, और अनेकानेक सामाजिक बंधनों में बँध चुकी है । अंतत: उसकी आशाओं पर तुषारापात होता है, जब इन्दु उसे लिखती है कि वह नहीं आ सकती । और आशाओं पर इस प्रकार तुषारपात दरअसल जीवन के एक यथार्थ को व्यक्त करता है । भारतीय समाज प्रेम सम्बन्धों के बारे में कठोरता से सलूक

करता है और एक विवाहिता से प्रेम तो लगभग अक्षम्य है । यहाँ विवाहित जीवन की अलग मर्यादायें हैं, और इसमें बहुत सारी बाध्यतायें हैं । जो प्रेमी इस स्थिति से अनजान बनकर प्रेम की आशाओं को सींचता है, वह व्यर्थ में परिश्रम करता है, और कुल मिलाकर "दिवास्वप्नी" है ।

लेखक प्रेम सम्बन्ध के बारे में एक और अनुभव रखता है । वह अपनी प्रेमिका से बेइंतहाँ मोहब्बत करता है । अपनी कहानियों में अपनी प्रेमिका को चित्रित किया करता है, और उसकी प्रेमिका उसपर मुग्ध है । वह उसके बिल्कुल करीब होती है, चिट्ठियाँ लिखती है, वायदे करती है, कसमें खाती है, और जीवन भर साथ निभाने की दृढ़ इच्छा दुहराती है । नायक उसके समर्पण पर गदगद है । लेकिन नायक एक कहानीकार मात्र है, और जैसा कि स्वाभाविक है, उसकी माली हालत खस्ता है । नायिका का पिता अपनी बेटी की शादी किसी डाक्टर, इंजीनियर, ठेकेदार -- यानी कुलमिलाकर एक पैसे वाले से करना चाहते हैं । वे कहानीकार का सम्मान करते हैं, और अपनी बेटी के लिए उचित वर ढूँढ़ने की सलाह माँगते हैं । नायिका बदल जाती है । वह प्रेम को क्षणिक मानने लगती है, और विवाह को स्थाई । स्थाई सम्बन्धों के निर्णय की जिम्मेदारी वह पिता की इच्छाओं पर छोड़ देती है । तात्पर्य यह कि वह प्रेम सम्बन्धों को रुपयों की बलि चढ़ाने के लिए तैयार है । वह नायक से प्रेम पत्रों की माँग करती है, और अपनी बहन के प्रेमी को खलनायक के रूप में किसी कहानी में चित्रित करने का आग्रह करती है ।

नायक टूटे मन से उस प्रेमिका की याद को "खलनायिका और बारूद का फूल" घोषित करता है । नायक के लिए यथार्थ की यह एक त्रासदीपूर्ण परिणति है । यह स्थिति समाज में मौजूद है । कई प्रेमी-प्रेमिका अंततः आर्थिक-सामाजिक असमानता के कारण जीवन साथी नहीं बन पाते, और एक दूसरे को कोसते हैं, प्रेम के बारे में आंसू बहाते हैं । ज्ञानरंजन ने इस यथार्थ को चित्रित किया है, परन्तु वे इस प्रकार प्रेम के ध्वस्त होने के कारणों को समूल देखने में शायद असफल हैं । वे प्रेम सम्बन्धों के टूटने पर अश्रुपात तो करते हैं, परन्तु उस आर्थिक-सामाजिक गैरबराबरी पर सीधे चोट नहीं कर पाते जिसके कारण लोगों का प्यार त्रासदी में बदल दिया जा रहा है ।

ज्ञानरंजन स्त्री-पुरुष के बीच सम्बन्धों की स्वाभाविकता को पहचानते हैं । इसीप्रकार इनके बीच सम्बन्धों की अस्वाभाविकता के आधारों से भी वे परिचित हैं । इसके बारे में उनका रुख न तो केवल काल्पनिक नजरिया है, और न किसी कुंठा से प्रेरित । औरत और पुरुष के बीच एक स्वाभाविक आकर्षण शक्ति काम करती है । यह आकर्षण शक्ति कभी-कभी अत्यंत निकटता से भी व्यक्त होती है, और इसमें शारीरिक मिलन भी संभव होता है । परन्तु यह आकर्षण एक स्पष्ट आधार पर खड़ा होता है । अर्थात आदमी हर कहीं एक दूसरे के साथ विपरीत यौन के आधार पर शारीरिक मिलन की कल्पना नहीं कर सकता । इसके लिए एक पूरी पृष्ठभूमि और स्वाभाविकतायें आवश्यक हैं । "छलांग" कहानी में कहानीकार ने इसी बात को व्यक्त करने की कोशिश की है । श्रीमती ज्वेल के प्रति नायक

का आकर्षण होता है । श्रीमती ज्वेल भी इससे लुत्फ उठाने की कोशिश करती है । परन्तु उम्र, नैतिकता और अन्य चीजें दोनों को शारीरिक सम्पर्क जोड़ने में बाधक हैं । और यह बाधा बिल्कुल स्वाभाविक है, और यह यौन सम्बन्धों के प्रति वास्तविक नजरिये को व्यक्त करने वाली है । यहाँ यह प्रश्न उठ सकता है कि ज्ञानरंजन प्रेम के इस प्रकार के व्याकरण को व्यक्त करते हैं कि इससे किन उद्देश्यों की पूर्ति होती है । परन्तु जहाँ तक स्त्री-पुरुष के परस्पर आकर्षण का सवाल है, ज्ञान एक यथार्थ को व्यक्त करने में सफल हैं ।

ज्ञान द्वारा प्रेम प्रक्रिया के विकसित होने के यथार्थ को "रचना-प्रक्रिया" नामक कहानी में भी अभिव्यक्ति मिली है । "रचना-प्रक्रिया" कहानी किसी कठिनाई जीवन में एक नौजवान व नवयुवती को प्रेम सम्बन्धों को जोड़ने में किन आलोचनाओं, प्रताड़नाओं को सहना पड़ता है, और इनका प्रभाव दोनों के सम्बन्धों की और निकटता में किस प्रकार व्यक्त होती है, इसे कहानीकार ने बताने की कोशिश की है । एक अफसर की लड़की के साथ नायक का परिचय होता है, जो लगातार विकसित होता चला जाता है । दोनों की निकटता कस्बाई जीवन में हलचल पैदा कर देती है, और इनके खिलाफ शहर में पर्चे पर पर्चे निकलने लगते हैं । पर्चों में इनपर तमाम घृणित आरोप लगाये जाते हैं, और इनके सम्बन्धों को अश्लील शब्दों के साथ जोड़ दिया जाता है । इससे दोनों में चिंता, गुस्सा व घृणा के भाव जागृत होते हैं, और आलोचकों के निमर्म प्रहार के

में वह सब कर लेते हैं जिनके आरोप उनपर लगाये जा रहे होते हैं । यानी दोनों प्रेमी-प्रेमिका एक दूसरे को शारीरिक रूप से स्वीकार कर लेते हैं । यहाँ पर कहानीकार ने प्रेमी युगल के विरोधियों की खबर ली है । अक्सर कस्बाई जीवन में इस तरह की बातें देखने को मिलती हैं । प्राय: किसी लड़का-लड़की के आपस में मिलने-जुलने बातचीत करने और एक दूसरे के निकटता स्थापित करने की प्रक्रिया को शंका की दृष्टि से देखा जाता है, और दोनों की ईमानदारी पर संदेह करते हुए इनके खिलाफ अस्वास्थकर प्रचार किया जाता है । इससे जहाँ एक ओर नौजवानों जोड़ियों को आपसी समझदारी के आधार पर जीवन साथी चुनने का अवसर नहीं मिलता, वहीं समाज के रूढ़ बंधनों को बने रहने का मौका मिलता है । ज्ञानरंजन ने इस कहानी में इस सत्य की ओर भी संकेत किया है । इस आधार पर प्रेम सम्बन्धों की विकास-प्रक्रिया को ज्ञानरंजन ने चित्रित करने का प्रयास किया है, और अपने जीवन के यथार्थ को पूरे समाज के सामने अनुभव करने के उद्देश्य से उपस्थित किया है ।

ज्ञानरंजन जीवन के यथार्थ को दाम्पत्य जीवन के अहसासों व रिश्तों के उतार-चढ़ाव के साथ भी व्यक्त करने की कोशिश करते हैं । पति-पत्नी के बीच एक मधुर रिश्ता होता है । दोनों एक दूसरे के अहसासों को समझने की कोशिश करते हैं, और एक दूसरे के प्रति विश्वसनीय समर्पण का भाव रखते हैं । हँसी-मजाक और आपसी चुहल दोनों की दिनचर्या में शामिल हैं, और एक के रूठने पर दूसरा मनाने को तैयार है । नव दम्पति के साथ यह प्रक्रिया और भी

तीव्रता से महसूस की जाती है "दांपत्य" शीर्षक कहानी में ज्ञानरंजन ने इसी बात को चित्रित करने का प्रयास किया है ।

ज्ञानरंजन ने यथार्थ को प्रेम-सम्बन्धों की उन्नति और अवनति के यथार्थ तक ही अपने को सीमित नहीं किया है । उन्होंने जीवन के अन्य पक्षों को केन्द्रित करते हुए भी कहानियाँ लिखी हैं । उनकी इस तरह की कहानियों में एक बहुचर्चित कहानी "फेंस के इधर और उधर"है । फेंस के इस तरफ और उस तरफ दो परिवारों का जीवन विभाजित हैं । एक परिवार पुरातन सोच-विचार का है, और प्रायः नये आचारों-विचारों के प्रति आलोचनात्मक रुख रखता है, अर उनकी खिल्ली उड़ाता है जबकि दूसरा परिवार खुला और आधुनिक संस्कारों को अपनाने वाला है । इन्हीं बिन्दुओं पर कहानी जीवन के विभिन्न क्रियाकलापों में सम्बन्ध सूत्र खोजती हुई सत्य को उद्घाटित करती है । और वह सत्य यह है आधुनिकता के अंधविरोध को हतोत्साहित करना । ज्ञानरंजन ने इस प्रकार "फेंस के इधर और उधर" कहानी के माध्यम से पारिवारिक जीवन के खुलापन व प्रगतिशीलता आचार-व्यवहार की आवश्यकता को महसूस कराया है । यह प्रगतिशील आचार-व्यवहार आज के जीवन का एक विकासशील यथार्थ है । इसके द्वारा यथार्थ की गतिशीलता स्थापित की जाती है । इ पड़ोसिन की बेटी की बिना गाजे-बाजे, दिखावे की शादी, शादी के बाद बगैर स्त्री-क्रन्दन किये ससुराल वालों के पास चला जाना फेंस के दूसरे पार रहने वाले लोगों के लिए निन्दा का मसाला अवश्य जुटाता है, परन्तु यह एक सच्चाई है कि वे लोग आधुनिक व्यवहारों

के निंदक होते हुए भी एक परम्परागत, रूढ़ संस्कार के सहारे खड़े हैं। आज भारत की विशाल जनसंख्या रूप कहा जाय तो पुराने विचारों से ग्रसित है, और उन विचारों को तोड़ने की निन्दा व प्रताड़ना करने पर आमादा है। ज्ञानरंजन ने इस सच्चाई को व्यक्त करते हुए ऐसे निन्दकों की कमजोर स्थिति को हमारे समक्ष रखा है।

ज्ञानरंजन ने नये और पुराने के बीच मौजूद संघर्ष को चित्रित करते हुए दो परिवारों के जीवन को हमारे सामने रखा है। परन्तु यह संघर्ष दो परिवारों के आचारों-व्यवहारों की भिन्नता के आधार पर खोजने के साथ किसी घर की दो इकाइयों के बीच भी खोजा जा सकता है। "पिता" एक पुरानी पीढ़ी का प्रतिनिधि होता है। वह पुरानी मान्यताओं, व्यवहारों, विचारों से परिचित होता है, और आधुनिक चाल-चलन, रहन-सहन के प्रति रूखा व्यवहार रखता है। उदाहरण के तौर पर दर्जी के पास कपड़ा सिलवाना, वाश-बेशिन में मुँह धोना, बीजली के पंखे की हवा में सोना पिता के लिए मान्य नहीं है। वह इन सुविधाओं को किसी न किसी रूप में नैतिक भ्रष्टता मान लेते हैं, और उनके प्रति नकारात्मक रुख अख्तियार कर स तमाम परेशानियाँ उठाते हैं। यानी पुराने व्यवहारों की सुरक्षा में वह तमाम कष्ट सहने को तत्पर हैं। दूसरी ओर पुत्र और परिवार के अन्य लोग उपलब्ध आधुनिक सुविधाओं का भरपूर उपयोग करते हैं। यहाँ पर कहानीकार विभिन्न तथ्यों के माध्यम से संस्कारग्रस्त मूल्यों पर चोट करता है, और एक सुखद जीवन के लिए आधुनिक संसाधनों के विकास व उपयोग का कायल है।

ज्ञानरंजन यथार्थ के एक अन्य पक्ष को उन बुद्धिजीवियों के आसपास तलाशने की कोशिश करते हैं, जो मात्र बुद्धिजीवी कहलाने के लिए तमाम प्रवंचनाओं में लिप्त हैं । वे संपत्ति की मोटी गाँठ अपने पास बाँधे हैं, परन्तु दिखाने के लिए सस्ती बीड़ियाँ पीते हैं, फटे-पुराने कपड़े पहनते हैं, और सस्ती चीजें खरीदते हैं । रात के अँधेरे में ऐसे ही लोग आलीशान होटलों में जाते हैं, स्काच और जीन की बोतलें साफ करते हैं, कैबरे डांसर की नंगी नाच देखते हैं, और तमाम भ्रष्ट कर्मों में लिप्त होते हैं । इस प्रकार के लोग दरअसल ऊँचे वर्ग के लोग हैं, और उनके साथ घुलेमिले हैं, परन्तु छद्म रूप से जनता के हितैषी के रूप में स्वयं को पेश करते हैं । ऐसा ही एक आदमी कुन्दन सरकार है । कुन्दन सरकार अपार संपत्ति का मालिक है, और पैसे के बल पर पलने वाली विकृत संस्कृति का एक प्रतिनिधि । कहानीकार इस संस्कृति का विरोध करता है । वह पतनशील होटलों की संस्कृति के खिलाफ है, और नशे में सोडा वाटर की बोतलें तोड़ता है, और स्वयं को कुन्दन सरकार का "चंटा" बनने से इनकार कर देता है । एवज में होटल के गुंडों द्वारा बुरी तरह पिटाई होती है, और वह वापस अपने साथियों के बीच आ मिलता है । इस कहानी के माध्यम से कहानीकार ने पैसे के राज में फैली पतनशील, छद्म, अध:पतित संस्कृति को उजागर किया है, और इसका सबल विरोध किया है । यह कहानी दरअसल बुद्धिजीवी समाज के एक हिस्से में मौजूद दोहरे व्यक्तित्व को साफ साफ उजागर करती है, और इनके विरोध में तर्कसंगत तथ्यों को रखती है ।

कहानी की यथार्थ के प्रति परिचित धारा को ज्ञानरंजन कुछ निश्चित संदर्भ प्रदान करते हैं । वे यथार्थ का चुनाव करते हुए अपने जीवन से जुड़ी घटनाओं को कहने की कोशिश करते हुए किसी महत्वपूर्ण सच्चाई को हमारे सामने रखते हैं । यह सच्चाई हमारे जीवन में मौजूद प्रेम-सम्बन्धों के उतार-चढ़ाव, नये-पुराने की बीच द्वन्द्व के साथ-साथ उस मानसिकता पर भी चोट करती हैजो स्वदेशी चीजों के प्रति अनमनस्कता का भाव रखती है, और विदेशी चीजों के प्रति समर्पण का । हमारे देश में विदेशी चीजों को "पसंद" करने की एक मानसिकता मजबूती के साथ मौजूद है । विदेशी चीजों का यह लगाव दरअसल इस बात का सूचक है, कि देश में स्वदेशी की भावना अविकसित है । . आजादी की लड़ाई के दौरान विदेशी सामानों के प्रति जो नफरत की तीव्रता थी उसमें कमी आई है । इस कमी के पीछे कुछ ठोस कारण हैं । वह कारण साफ हैं । आजादी की लड़ाई के समय देशी उद्योगपतियों का विदेशी शासकों से टकराव था, परन्तु आजादी के बाद वह टकराव घटता गया, और अंतत: दोनों के बीच आपसी समझौता भी हो गया । इस समझौता के कारण आम आदमी में निराशा फैली और विदेशी वस्तुओं के प्रति तीखा नफरत खत्म हो गया । फिर विदेशी सामानों के सस्ते दामपर भारत में मौजूद होने के कारण और उनका तुलनात्मक रूप से गुण में भी ऊँचा होने के कारण आम तौर पर पसंद किये जाने लगे । यह स्थिति वस्तुओं की खरीद-फरोख्त तक सीमित नहीं है, वरन पढ़े लिखे लोगों के विदेश पलायन को भी अपने साथ शामिल करता है । ज्ञानरंजन

की कहानी "बहिर्गमन" इन्हीं वास्तविकताओं के इर्द-गिर्द टिकी हुई है ।

ज्ञानरंजन ने अपनी कहानियों में यथार्थ को वैयक्तिक अनुभवों से शुरू किया है, और लगातार उन्होंने इन अनुभवों को बड़े दायरे में विस्तारित करने का प्रयास किया है । इस प्रकार उनकी कहानियाँ एक व्यक्ति से शुरू होकर पूरे समाज के यथार्थ को समेटने का प्रयास करती हैं । वह व्यक्ति के अनुभवों को रखते समय स्वाभाविकता से इतना घनिष्ठ रूप से जुड़ जाते हैं कि प्रायः यह पता लगना कठिन होता है कि व्यक्तिगत संदर्भ ने कहाँ अपना दायरा बदल दिया है । ज्ञान द्वारा यथार्थ को देखने का यह एक उल्लेखनीय तरीका है ।

ज्ञान ने अपनी कहानियों में वास्तविकताओं को तराशने का और उन्हें व्यापक आयाम प्रदान करने का जो प्रशंसनीय प्रयास किया है, वह कहानी के क्षेत्र में एक विशेष योगदान कहा जा सकता है । उनके पूर्ववर्ती कहानीकारों ने प्रायः इस दिशा में महत्वपूर्ण कार्य किये हैं, और ज्ञानरंजन अपने को उस परम्परा के साथ जुड़ा कर पाते हैं । दूसरे शब्दों में कहा जाय, तो उन्होंने प्रेमचंद, चन्द्रधर शर्मा गुलेरी जैसे महान यथार्थवादी कहानीकारों की परम्परा और नई कहानी के कहानीकारों की परम्परा की एक अविच्छिन्न धारा के रूप में अपने को रखने का प्रयास किया है ।

ज्ञानरंजन के यथार्थ के प्रति सचेत जुड़ाव को चिह्नित करने के साथ ही उनकी कुछ सीमायें भी रही हैं जिनपर ध्यान दिया

जाना जरूरी है । किसी भी कलाकार के सही मूल्यांकन के लिए यह जरूरी है कि उसकी कृति को समय और सच की समस्याओं के साथ जोड़ कर देखा जाय और जीवन के यथार्थ से उसके अलगाव को भी तलाशा जाय । इससे कलाकार की रचनात्मक ईमानदारी व उसकी परिपक्वता को ठीक-ठीक आंका जा सकता है ।

ज्ञानरंजन ने विभिन्न संदर्भों में यथार्थ को रखने का प्रयास किया है । उन्होंने अंधविश्वासों, कुरीतियों, प्रेम सम्बन्धों के बिखराव, समाज में मौजूद छद्म नैतिकता व छद्म व्यवहार को स्पष्टता के साथ चित्रित किया है । वह इन तमाम संदर्भों को लिखते हैं, परन्तु उनके लिखने का "हैंगल" स्वयं के अनुभवों से शुरू होता है । चाहे अमरूद का पेड़ कटता हो, चाहे सीमली स्टेशन या सुहाग से प्रेम सम्बन्धों में बिलगाव का मामला हो या कोई अन्य तथ्य, वे स्वयं से शुरू होते हैं । यानी वे अपने अनुभवों, अहसासों से यथार्थ के अन्दर सामाजिक यथार्थ की उपस्थिति को शाकमल मानते हैं । यही कारण है कि उनकी तमाम कहानियों का मुख्य-चरित्र "मैं" होता है । यह सही है कि व्यक्तिगत अहसासों के अन्दर सामाजिक यथार्थ के स्पन्दनों का अनुभव किया जा सकता है । व्यक्ति समाज का ही एक अभिन्न हिस्सा है । परन्तु यहाँ यह ध्यान रखना जरूरी है कि व्यक्ति इच्छाओं, भावनाओं या मान्यताओं के आधार पर ही सिर्फ संचालित नहीं होता । बल्कि व्यक्ति के अन्दर मौजूद ये तमाम चीजें सामाजिक संदर्भों से प्रभावित और संचालित होती हैं । इस रूप में व्यक्ति के अहसास, अनुभव और उसकी इच्छाशक्ति समाज के

विभिन्न व्यवहारों और इनकी विभिन्न क्रियात्मक रूपों के परिणाम के रूप में होते हैं। इसे और इसी के आधार पर वैयक्तिक चिंतन व्यवहार और तमाम क्रियाओं को पढ़ने की कोशिश की जा सकती है। व्यक्तिगत अनुभूतियों को इस प्रकार प्रारंभ बिन्दु मानकर यथार्थ की कोई व्यापक धारणा नहीं दी जा सकती। दूसरे शब्दों में अनुभूत सत्य या भोगे हुए सत्य की अहमियत तभी मिल सकती है जब वह सामाजिक वास्तविकताओं का प्रतिबिम्ब न हो। ज्ञानरंजन इस मामले में कहीं कमजोर स्थितियों में दिखाई पड़ते हैं, और लगता है कि वे स्वयं के अनुभूत यथार्थ को और टेकर सामाजिक, यथार्थ में बदलना चाहते हैं और इसमें सफल नहीं हो पा रहे हैं। और इसका कारण भी स्पष्ट है। यह जरूरी नहीं है कि किसी व्यक्ति का अनुभूत सच पूरे तौर पर सामाजिक वास्तविकता में उतर जाय। इसलिए यथार्थ को सिर्फ अनुभूत नहीं होना चाहिए बल्कि इसकी सर्वव्यापकता और सर्वसम्मति भी होनी चाहिए। इस प्रकार यथार्थ को सामाजिक सच्चाइयों का कलात्मक पुनर्सृजन होना चाहिए नहीं कि व्यक्तिगत अनुभूतियों का प्रस्तुतीकरण। जहाँ यथार्थ को ज्ञान की कहानियों में सर्वव्यापकता नहीं मिली है, वहाँ उनकी कहानी कमजोर हुई है।

ज्ञानरंजन कहानी में स्वयं को पूरी अंतर्वस्तु में शामिल किये रहते हैं। प्रारंभ से अंत तक कहानी में इस प्रकार अंतर्वस्तु के साथ रचनाकार की उपस्थिति कहानी को एक पक्षीय स्थिति में डाल देती है। कहानी के लिए आसपास के चरित्रों को भी वे अपनी

रुचि के अनुसार लाते हैं, और इस प्रकार कहें तो, अपने अनुकूल सत्यों को ज्यादा रंग चढ़ाने के लिए वे कुछ स्थितियाँ को उपस्थित करते हैं । इससे कहानी के कथ्य के प्रति कहानीकार का जुड़ाव जहाँ एक ओर साबित होता है, वहीं दूसरी ओर इसकी सर्वमान्यता के प्रति कुछ शंका होती है । उदाहरण के लिए "छलांग" कहानी को देखें । इस कहानी में एक प्रौढ़ा श्रीमती ज्वेल के साथ "मैं" का मिलन होता है । "मैं" ज्वेल के प्रति आकर्षित होता है । श्रीमती ज्वेल के पति हैं, बच्चे हैं और तमाम पास-पड़ौस है । एक पूरी सामाजिक जिन्दगी उनके आसपास जीवित सत्य की तरह खड़ी है, और "मैं" फिर भी श्रीमती ज्वेल के साथ एकांतिकता की माँग रखता है, और एकांतिकता पा ही लेता है । बाद के संदर्भ जो भी हों, पर इन तमाम स्थितियों से लगता है कि कहानीकार कुछ बातों में कहने के लिए एक वातावरण का निर्माण कर रहा है, एक ऐसे वातावरण का जो सहज ही विश्वसनीय नहीं है ।

ज्ञानरंजन का यथार्थ के प्रति आग्रह मूलभूत अंतर्विरोधों के साथ दिखाई नहीं देता । वे जीवन के यथार्थ के सम्पूर्ण पक्षों को हमारे समक्ष नहीं उभारते बल्कि मध्यवर्गीय जरूरतों व अनुभवों के तहत बहुत सारी बातें कहते हैं । जीवन के यथार्थ को एक विस्तारित अनुभव माना जाता है । यह विस्तारित अनुभव अंधविश्वासों के विरोध, प्रेम सम्बन्धों के अलगाव व टूटन का पारिवारिक रीति-नीति व सोच को तो अपने साथ समेटता ही है सामाजिक जीवन

के विभिन्न अंतर्विरोधों को भी स्पष्ट करता है, और उनके सार्थक निदान के उपाय को संकेतित करता है। यह सही है कि सारे लेखकों से यह मांग नहीं की जा सकती कि वह मजदूर-किसान के उत्पीड़न हालातों व उनके ऊपर हो रहे विभिन्न जुल्मों को ही कहानी का अनिवार्य विषय बनायें, परन्तु क्या यह नहीं कहा जा सकता कि जो लेखक जन जीवन के इस बहुसंख्यक हिस्सों से अलग मध्यवर्गीय अहसासों पर अपनी कहानियों को केन्द्रित करता है, वह मध्यवर्गीय कहानीकार के दायरे को तोड़ नहीं पाता ? आखिर क्या कारण है कि प्रेमचंद एक कहानीकार के रूप में जिस खूबी के साथ मध्यवर्गीय जीवन के बारे में लिखते हैं, उससे अधिक गहराई से किसानों की दुःखद स्थिति और उनके कठोर जीवन संघर्ष को चित्रित करते हैं। प्रेमचंद भी अपनी सामाजिकता के आधार पर मध्यवर्गीय जीवन से जुड़े हैं, परन्तु उनमें किसानों के दुःख-दारुण का गहरा ज्ञान था, और इनको उन्होंने अपनी कहानियों में स्थापित करते हुए अपनी मध्यवर्गीय स्थिति को तोड़ा और स्वयं को कहानीकार के रूप में व्यापक बनाया किसी भी कहानीकार को अगर जनता के व्यापक हिस्सों में स्थापित होना है, तो उससे इस प्रकार के विस्तार की मांग अवश्य ही की जायगी। ज्ञानरंजन व्यापकता की इस मांग का क्या जवाब देंगे यह एक प्रमुख प्रश्न है। यही कारण है कि हमारे देश में प्रेमचंद के बाद उनके स्तर का कोई बड़ा कहानीकार नहीं हो पाया है।

वैसे ज्ञानरंजन में निश्चय ही एक बड़े कहानीकार के महत्वपूर्ण गुण मौजूद हैं। वह जीवन की असंगतियों, अंतर्विरोधों को कलात्मकता

के साथ कहानी में उतार पाने में सफल हैं। वे अपने आसपास की घटनाओं व संदर्भों को यथार्थ के व्यापक क्षेत्र में विस्तारित करने की कोशिश से संचालित हैं, और इस रूप में ज्ञान की एक बड़ी [illegible] सार्थक भूमिका हिन्दी कहानी में बनती है। ज्ञानरंजन प्रेमचंद के स्तर को छूने में भले सफल नहीं हों, परन्तु यह सच्चाई है कि अपनी मध्यवर्गीय सीमाओं में वे नई कहानी आन्दोलन के अन्य कहानीकारों से यथार्थ के प्रति समझदारी में व इसे संवेदनात्मक स्तर पर कहानी में बुनने में कदापि पीछे नहीं पड़ते हैं। बल्कि कहाजाय, तो कुछ हद तक उन्होंने नई कहानी के कहानीकारों को कुछ मायनों में पीछे भी छोड़ दिया है, और मध्यवर्गीय जीवन संदर्भों को तीव्रता के साथ महसूस करवाने में सार्थक प्रयास किया है। वे कुछ मामलों में अकहानी से प्रभावित अवश्य हैं, परन्तु इस प्रभाव के कारण उनके पूरे कहानी-कार की सेहत को काशीनाथ सिंह या दूधनाथ सिंह जैसे कहानीकारों की तरह ज्यादा आघात नहीं लगता। दरअसल ज्ञानरंजन कुल मिला कर मध्यवर्ग के जीवन यथार्थ को कहानी में रख पाने में सफल हैं। उनकी कमजोरियों को इस पहलू के साथ जोड़कर ही देखा जा सकता है।

--------

# चौथा अध्याय

## ज्ञानरंजन की कहानियों में मानवीय संबंध

ज्ञानरंजन की कहानियाँ मानवीय संबंधों की आलोचना करती हैं, और विकल्प में बेहतर मानवीय संबंधों की जरूरत पर बल देती हैं। मानवीय संबंधों की आलोचना करने के सिलसिले में ज्ञानरंजन प्रायः तमाम करीबी रिश्तों की जाँच-परख करते हैं। उनकी दृष्टि चौकन्नी और विश्वस्त है। पिता के साथ संबंध हो, प्रेमिका के साथ रिश्तों का बनाव या बिगाड़ हो, पत्नी के बारे में कटु-मधु अनुभव हों या इन्हीं से मिलते अन्य संदर्भ, ज्ञानरंजन बारीकी से इन संबंधों का परीक्षण करते हैं, और इनमें मौजूद जड़ता, कृत्रिमता, बनावटीपन, पुरातनता आदि को हमारे सामने खोलते हैं।

दरअसल व्यक्ति और परिवार या तमाम संबंध एक विकास प्रक्रिया को जीते हैं। इन तमाम संबंधों की अनिवार्यता आदमी को एक बेहतर जिन्दगी प्रदान करने के लिए मानी जाती है। माता पिता, भाई, पत्नी-प्रेमिका ये तमाम रिश्ते सामाजिक दायित्वों के बोध से उत्पन्न हुए हैं, और सामाजिक परिस्थितियों के विकास के साथ इन रिश्तों के स्वरूप में परिवर्तन हुए हैं। इस परिवर्तन के आधार पर ही इन रिश्तों में लगातार नयापन आता गया है,

और इनकी ताज़गी बनी रही है । ज्ञानरंजन अपनी कहानियों में रिश्तों में सक्रिय परिवर्तन के तत्वों पर नजर रखते हैं, और इनमें ताजगी भरने के कायल हैं ।

हमारे रिश्ते हमारी इच्छाशक्ति पर सिर्फ निर्भर नहीं करते हमें रिश्तों का निर्माण करना होता है, और उन्हें जीना होता है । रिश्तों को बनाना और जीना एक बहुत ही कष्टसाध्य प्रक्रिया है । रिश्तों के निर्माण के लिए वस्तुस्थिति का दबाव मुख्यरूप से काम करता है । यानी अनुकूल स्थितियों के मुताबिक ही रिश्तों को बनाया जा सकता है, और उनका पोषण किया जा सकता है । प्रतिकूल परिस्थितियों में मजबूत रिश्ते भी भरभरा कर टूट जाते हैं । ज्ञानरंजन अपनी कहानियों में रिश्तों की इन तमाम स्थितियों का मूल्यांकन करते हैं, और इनके बारे में अपनी राय रखते हैं । वे रिश्तों में आ रहे बिखराव के कारणों को तथ्यों के आधार पर कलात्मक रूप से हमारे सामने उपस्थित करते हैं, और उन कारणों को छाँटकर अलग करने का प्रयास करते हैं जिनके कारण मानवीय संबंधों में घुन लगते हैं ।

ज्ञानरंजन परिवार और समाज की विभिन्न इकाइयों की सत्ता को खुद के अनुभवों के इर्द-गिर्द अनुभव करते हैं, और उन्हें अपने जीवन में मौजूद व्यवहारों के साथ मिलाकर तोलते हैं । उनका पूरा रचनासंदर्भ उनके आसपास के चरित्रों को उपस्थित करता है । इन चरित्रों का उनके जीवन से स्वाभाविक और सार्थक रिश्ता है ।

ज्ञानरंजन मानवीय आवेगों, संवेगों को कहानी की बुनावट में स्थापित कर पाने में समर्थ हैं । वे संबंधों की डोर पकड़कर आदमी की कमजोरियों और अच्छाइयों को गिनाते चले जाते हैं । परन्तु उनका इस प्रकार का प्रयास कोई एकाकी क्रियाकलाप नहीं होता । विभिन्न पारिवारिक व सामाजिक चरित्रों के माध्यम से, उनके व्यवहारों में मौजूद संगतियों और असंगतियों के आधार पर वे पूरे वातावरण का एक चित्र खींच देते हैं । यह चित्र हमेशा धुंधला होता है, और इस बात की आशा करता है कि नये, रंगों ब्रुशों के आधार पर इसमें फिर से रंग भरा जायगा । इस प्रकार ज्ञानरंजन मानवीय संबंधों को सामाजिक संबंधों व हालातों के साथ जोड़कर उपस्थित करते हैं, और दोनों के बीच पारस्परिक विकासमान रिश्ते को भी स्थापित करते हैं ।

पारिवारिक जड़ता के विरोधी --

ज्ञानरंजन पारिवारिक जड़ता के खिलाफ हैं । वे पारिवारिक रिश्तों में नयापन के पक्ष में हैं, और चाहते हैं, पुराने अंध-व्यवहार टूट जायें । ज्ञानरंजन के पुराने विचारों, व्यवहारों के विरोध में खड़ा होने का अर्थ यह नहीं है कि पारिवारिक जीवन से जुड़ी स्वस्थ परम्पराओं के वे विरोधी हैं, और ~~xxx~~ नयापन के नाम पर किसी ~~xxxxx~~ अराजक आचरण को स्वीकार रहे हों इसका साफ तात्पर्य यह है कि वर्षों से चली आ रही मान्यताओं,

रीतियों, नीतियों के बारे में वे एक सजग दृष्टिकोण पेश करते हैं, और पूरे परिवार से इसके बारे में एक सचेत मूल्यांकन करने का आग्रह करते हैं ।

हमारे जीवन के व्यवहारों के बारे में एक आलोचनात्मक दृष्टिकोण रखना निहायत जरूरी है । यह एक ऐसा आग्रह है जिसके द्वारा हम अपनी कमजोरियों को भीतर झांक कर देख सकते हैं । ज्ञानरंजन पारिवारिक संबंधों में मौजूद कमजोरियों से वाकिफ हैं, और वे इन कमजोरियों की सीधी आलोचना करते हैं, उन्हें नई पीढ़ी के हित में, उसके विकास के लिए यह काम बहुत ही जरूरी लगता है ।

पारिवारिक मामलों में हमारा जीवन तमाम अंधविश्वासों का शिकार है । सामाजिक परिवर्तन व विकास की मंजिल को भी यह स्थिति जाहिर करती है । हमारे आम परिवारों में आज भी अंधविश्वासों की जड़ें गहरी हैं । यहाँ कोई घातक बीमारी की दवा ओझा-गुनी के अमृत में तलाशी जाती है, और सूखा पड़ने पर इन्द्र देवता की आराधना की जाती है । किसी के घर बच्चा मर गया, तो उसका दोष किसी गाँव की बुढ़िया डायन पर डाल दिया जाता है, और परिवार, घर में कलह होने पर फले-फूले अमरूद को जड़ से नष्ट कर दिया जाता है । माँ-पिता और पास-पड़ोस के लोग इस मानसिकता से ग्रस्त हैं, और नौजवान लोगों का इन अंधविश्वासों के खिलाफ मौजूद गुस्सा सार्थक स्वरूप ग्रहण नहीं कर रहा है । नई

और पुरानी पीढ़ी के चिंतन में मौजूद इस अंतर्विरोध को ज्ञानरंजन ने संजीदगी के साथ उपस्थितकिया है, और नई पीढ़ी की सोच को उन्नत व परिवर्तनशील माना है । (अमरूद का पेड़) इस प्रकार उन्होंने परिवार में मौजूद अंधविश्वासों व पुरानपंथी जड़ता का विरोध किया है ।

नये आचार-व्यवहार के पक्षपाती --

ज्ञानरंजन जीवन को नई दिशाओं में खोजने का प्रयास करते हैं, और इनके आधार पर आपसी संबंधों के निर्धारण को मान्यता देते हैं । समाज में मौजूद आपसी रिश्तों का एक निश्चित सामाजिक गणित होता है, और इसे तोड़कर आचरणों के, व्यवहारों के नये समीकरण बनाना प्रायः कठिन कार्य है । इसके विभिन्न परेशानियों का सामना करना पड़ता है । अगर कोई परिवार पुरानी रीतियों मान्यताओं को तोड़कर नये रिश्तों का निर्माण करना चाहता है तो उसके जाने-अनजाने उसपर आक्षेप किये जाते हैं । प्रायः पुरानी रीतियों-नीतियों के आपसी टकराव से एक नया नियम उभर कर आता है, और नई मान्यताओं, आचरणों को जन्म लेने का मौका मिलता है, व इसे सामाजिक स्वीकृति मिलती है । ज्ञानरंजन रिश्तों मान्यताओं के बारे में नये कायदों के जन्म लेने व उसे सामाजिक स्वीकृति दिलवाने के पक्षपाती हैं । "फेंस के इधर और उधर" शीर्षक कहानी से इस तथ्य को उठाया जा सकता है । इसमें एक पड़ोसी

की दूसरे पड़ोसी के आचरणों के बारे में आलोचनाएँ हैं । और ये आलोचनायें रिश्तों के बदलते स्वरूप और आचरण के नये नियमों के बारे में हैं । पड़ोसी की लड़की आधुनिक है । पूरा पड़ोसी परिवार आधुनिक है । रहन-सहन, शादी-विवाह तमाम अवसरों पर यह आधुनिकता दूसरा पड़ोसी का परिवार लक्षित कर रहा है, जो खुद परम्परा के नाम पर पुराने आचरण को ढो रहा है । मतलब पड़ोसी के परिवार की असलिए खिल्ली उड़ाई जाती है कि लड़की अकेले बाहर घूमने निकल जाती है, शादी केसमय कोई विशेष आयोजन -- ढोल-बाजा और तमाम तामझाम नहीं है । विवाहिता ने शादी के समय ससुराल जाते समय जरा भी क्रन्दन नहीं किया आदि आदि । ज्ञानरंजन ऐसी तर्कहीन आलोचनाओं की खबर लेते हैं । और ऐसी आलोचनाओं में लीन रहने वाले परिवारों की पीड़ित मानसिकता को व्यंग्य की दृष्टि से देखते हैं । इस प्रकार वे रिश्तों में आ रहे बदलाव को सकारात्मक पक्षों को पहचानते हैं, और इन्हें मानवीय धरातल पर स्वीकार करते हैं ।

ज्ञानरंजन पिता के साथ रिश्तों के संदर्भ में --

ज्ञानरंजन पिता के साथ संबंधों के निर्धारण में भी बेहद मानवीय हैं । वे पिता के साथ कोई रूढ़ विचारों के आधार पर संबंध नहीं चाहते, वरन संबंधों को व्यावहारिक आवश्यकताओं के अनुरूप चिन्हित करना चाहते हैं । हमारे देश में प्राय: माता-पिता

के साथ पुत्र के रिश्ते के बारे में विभिन्न धारणायें काम करती हैं। पिता की आज्ञाओं का पूर्णतः पालन करना, उनके विचारों का सम्मान करना, सुबह-सुबह उनके पाँव छूना आदि आदि एक विचार के रूप में हैं। इसे ही इस प्रकार कहा जा सकता है --

"प्रातकाल उठि रघुनाथा, मात-पिता गुरू नावहिं माथा।"

ज्ञानरंजन पिता-पुत्र के इस पारम्परिक संबंध तक अलग रख रखते हैं। इसमें पिता के प्रति पूर्ण सम्मान भाव को रखते हुए उनके विचारों और पुरातन व्यवहारों की आलोचना शामिल है। पिता प्रायः पिछली पीढ़ी का प्रतिनिधि होता है और नई पीढ़ी के साथ जुड़ती मान्यताओं, परिवर्तनों को प्रायः पिता शीघ्र ग्रहण नहीं करते। वे वाश बेसिन में मुँह नहीं धोते, अच्छे दर्जी से कपड़े नहीं सिलवाते, निर्मम गर्मी में भी पंखे की हवा में नहीं सोकर गर्मी में रातभर चारपाई पर करवटें बदलते रहते हैं। इस प्रकार के पिता एक रूढ़ मान्यता के तौर पर हमारे समाज में मौजूद हैं, और ज्ञान रंजन ऐसे पिताओं के बारे में आलोचनात्मक हैं। और यह आलोचना जायज भी है।

ज्ञानरंजन पिता के बारे में अगर यह आलोचना रख रहे हैं, तो उनका दृष्टिकोण पिता के प्रति निषेध का कदापि नहीं है। वह बेहद मानवीय आधारों पर पिता के साथ एक रिश्ते में बँधा महसूस करते हैं, और इस बात से दुःखी हैं कि तमाम दुविधाओं के रहते पिता उस पुरानी मान्यताओं में जकड़े रहने की जिद में कठिनाइयों

को झेल रहे हैं। जाहिर है, इस तरह की अव्यावहारिकग्रस्तता किसी एक व्यक्ति की पिता का, न होकर एक विचार विशेष का है जिसके पिता एक "टिपिकल" चरित्र हैं। ज्ञानरंजन की आलोचना इस प्रकार के अव्यावहारिक, दोषपूर्ण, रुग्ण विचारों से है। और इस संदर्भ में कहा जा सकता है कि ज्ञानरंजन मानवीय संबंधों की व्यावहारिकता से परिचित हैं, और इस आधार पर आपसी संबंधों को कसते हैं।

पत्नी के साथ रिश्तों के संदर्भ में --

ज्ञानरंजन पत्नी के साथ रिश्तों के संदर्भ में हास्य और मानवीयता की भावनाओं के बीच एकता बनाये हुए रहते हैं। पत्नी के साथ रिश्तों के बारे में ज्ञान का एक मजाकिया दृष्टिकोण नजर आता है, पर इस मजाक में वे मानवीय संवेगों को भूल नहीं जाते। पति-पत्नी के बीच जीवन भर का रिश्ता होता है। इस रिश्ते के दौरान बहुत सारे मीठे, कड़वे अनुभव होते हैं। ज्ञान इन अनुभवों को अनुभव करते हैं। परन्तु वे मीठे अनुभवों और कड़वे अनुभवों के बीच विभाजन की दीवार को हास्यतत्व से कुछ हद तक दूर कर देते हैं, और इनको इस प्रकार जीवन की एक सामान्य नियमावली के साथ जोड़ देते हैं। इस पूरी प्रक्रिया में वे जीवन में मौजूद जटिलताओं, कठिनाइयों के बारे में अपना दृष्टिकोण रखते चलते हैं, और छद्म व औपचारिक व्यवहारों के अंदर के यथार्थ को देखते हैं।

इन तमाम कोशिशों के लिए उनका उद्देश्य है जीवन में आ पड़ी रिश्तों की जटिलता को ढीला करना और उसे मानवीय संवेदनाओं के साथ महसूस करना । "हास्यरस" कहानी में उन्होंने इस तथ्य को रखने का प्रयास किया है । कहानी कोर्ट मैरिज के संदर्भ में कोर्ट के अहाते से शुरू होती है । मुख्यचरित्र "मैं" कोर्ट से अपनी पत्नी (और पूर्व प्रेमिका) के साथ निकल रहा है, और उसकी शादी के गवाह मित्र उसके साथ हैं । "मैं" इस बात से बेहद दुःखी है कि वह अब इसी लड़की के साथ जीवन बिताने को बाध्य है । वह स्वयं को पराजित महसूस करता है । कल तक प्रेमिका के साथ हँसी-मजाक करता था और बराबरी का उसका जीवन था जिसमें जिम्मेदारियाँ कम और मौज-मस्ती अधिक थी । अब पत्नी का उसपर अधिकार हो गया है, और वह उसके आदेशों का पालन करने को बाध्य है, इस अंतर्विरोध के साथ पति-पत्नी के रिश्तों को अहसास करते नायक गुजर रहा है, और अपने आने दिनों की मुसीबतों को आहसास करते हुए संकटग्रस्त है । परन्तु इस संकट में एक हास्य भाव छिपा है, जो आदमी को तेजी से गुदगुदाता है, और पति-पत्नी के बीच के सम्बन्धों में आई कृत्रिमता को साफ करता है व उसे ताजगी प्रदान करता है । इससे पति-पत्नी के रिश्तों में मानवीय अहसास व स्पन्दन तेजी से उभरते हैं, और वे पारिवारिक जुड़ाव को सम्प्रेषित कर पाते हैं ।

ज्ञानरंजन मजाक के दायरे में पति-पत्नी के बीच के संबंधों को रखने के साथ उन दोस्तों पर भी निगाह रखते हैं, जो इन

संबंधों को "आब्जर्व" करते हैं । उनके दो दोस्त उनके लिए "कोर्ट मैरिज" के गवाह बनते हैं । दोनों क्वांरे हैं, और ज्ञानरंजन उनके साथ भी एक हास्यपूर्ण रिश्ता जोड़ लेते हैं । वे कोर्ट से निकलते समय का वर्णन करते हुए कहते हैं कि दोनों दोस्त उनकी अभी-अभी हुई पत्नी को अपनी पत्नी की निगाहों से देख रहे थे । इस प्रकार के अहसास में एक हास्य भाव है, परन्तु इसमें मनोवैज्ञानिक सच्चाई का एक पहलू भी मौजूद है । प्राय: सामाजिक अज्ञानता की स्थिति में हमारे बहुत सारे संबंध आलोचना की परिधि में आ जाते हैं । घर-परिवार और समाज में मौजूद विभिन्न संबंधों में इस अज्ञानता के कारण महिलाओं को वह सम्मान नहीं मिलता जो उन्हें सामाजिक बराबरी प्रदान करे। ज्ञानरंजन इसी बात की ओर इशारा करने का प्रयास कर रहे हैं । वे इस बात को कहने के लिए हास्य का सहारा ले रहे हैं ताकि दोस्तों को उससे गंभीर आघात नहीं लगे, और रिश्तों को और मजबूती मिल जाये ।

वे पत्नी के साथ प्रेम संबंधों को कहानियों में रखने में एक खुला भाव रखते हैं । वे प्राय: उन बातों का जिक्र भी इस क्रम में करते हैं जिन्हें पत्नी-पति के रिश्तों के संदर्भ में ही देखा जा सकता है, और इस प्रकार का नजरिया अपनी कहानियों में अपनाकर ज्ञानरंजन पाठकों तक एक दोस्ताना संबंध बनाने की कोशिश करते हैं । इस प्रकार की कोशिश में वे पति-पत्नी के बीच के व्यवहारों में मौजूद चालाकी को आलोचनात्मक रूप से रखते हैं । परन्तु ऐसा करते समय वे निर्ममता का परिचय नहीं देते, और इन तमाम बातों को मानवीय संबंधों को पुष्ट करने के उद्देश्य से रखते हैं ।

पति-पत्नी के बीच के संबंधों को प्रस्तुत करने में ज्ञानरंजन की कहानी "दांपत्य" भी बेहद संवेदनशील है । इस कहानी में एक नव दंपत्ति के आपसी प्यार-मुहब्बत को दर्शाया गया है, और इसमें प्रेम-संदर्भों का एक खुला वर्णन भी है । इन सबके बावजूद इन संबंधों में अश्लीलता को किसी प्रकार तरजीह नहीं मिलती, और पति-पत्नी के संबंधों की संगीतात्मकता निखर कर आती है । इस कहानी में इस प्रकार एक नव दंपत्ति के क्रिया व्यवहारों के मनोविज्ञान को रखते हुए कहानीकार ने इसे जीवन के लय के साथ जोड़ने का प्रयास किया है । "मैं" एक पति के रूप में है, और उसकी पत्नी उस पर प्यार करने के लिए हमेशा घटा की तरह टूटती रहती है । "मैं" उसके इस व्यवहार के मनोविज्ञान को समझता है । वह ऑफिस जाते समय जल्दबाजी में पत्नी को अलग कर देता है, पर रास्ते में वापस होते समय उसे अपने व्यवहार से दुःख होता है । वह पत्नी को खुश करने के लिए शहर के सबसे अच्छे हलवाई के पास से मीलों पैदल चलकर रसगुल्ले खरीदकर पत्नी के लिए ले जाता है । रात ज्यादा नहीं होने के बावजूद पत्नी सुबह के अपमान के कारण पहले से सोई है । पति उसे बार-बार जगाने की कोशिश करता है, और अंततः गुस्से में स्वयं रसगुल्ले चट कर जाता है । यहाँ पर कहानी ऊँचाई पर पहुँचती है, और पति-पत्नी के बीच भावुकतापूर्ण रिश्ते को अभिव्यक्त करती है । फिर पत्नी जागती है, और वह सारा कुछ जानकर पति से बेहद खुश होती है, और पति के अगले दिन रसगुल्ले लाने के वायदे के साथ दोनों खुश-खुश सो

जाते हैं । इस पूरी कहानी में ज्ञानरंजन पति-पत्नी के बीच की मजबूत संवेदनाओं को अभिव्यक्त करते हैं, और इसे रिश्तों की ताजगी के साथ जोड़ते हैं ।

<u>प्रेमिका के संदर्भ में --</u>

ज्ञानरंजन प्रेम संबंधों को मानवीय मूल्यों के साथ जोड़कर देखते हैं । दरअसल एक ऐसी समाज व्यवस्था में जहाँ रुपये का बोलबाला हो, प्रेम संबंधों पर भी इसका असर पड़े बिना नहीं रहता । यह कहा जाता है कि प्रेम रुपये-पैसे, जात-कुजात, धर्म-सम्प्रदाय के बंधनों को तोड़कर निहृत होता है । परन्तु इस आदर्शवादी धारणा के अनुसार वास्तविकता का प्रायः रिश्ता नहीं है, और प्रेम को पनपने व फलने-फूलने में समाज की कठोर वास्तविकताओं का सामना करना पड़ता है । ज्ञानरंजन इस सच्चाई को अपनी कहानियों में व्यक्त करते हैं । वे प्रेम संबंधों पर आर्थिक, सामाजिक दबावों को उद्घाटित करते हैं । उनके द्वारा इस प्रकार के उद्घाटन से प्रेम संबंधों की आहत स्थिति को समझने में मदद मिलती है । प्रेम संबंधों के इसप्रकार आर्थिक-सामाजिक परिस्थितियों के आगे बिखरने से ज्ञानरंजन टूटते नहीं, वे निराशा और हताशा के दौर से नहीं गुजरते, और न उन्हें आत्महत्या करने का अहसास होता है । वे निहायत

हल्के भाव से प्रेम की त्रासद परिणति को स्वीकारते हैं जैसे उन्हें ज्ञात हो कि इस विषम आर्थिक-सामाजिक दबाव में प्रेम-संबंधों का यही हश्र होना था। प्रेम के इस प्रकार से बिखर जाने से कहानीकार एक मानवीय संवेदना से नायक को जोड़ देता है, और नायक भले ही प्रेम के दुःखद अंत को झटक दे, पाठक उसके प्रति लगाव महसूस करता है। इससे साफ जाहिर होता है कि प्रेमिका के अलग हो जाने का दर्द न केवल नायक के लिए कठिन है, वरन और लोग भी इस दर्द के हिस्सेदार हैं, फिर नायिका या खलनायिका (जो भी कहें) के प्रति लोगों का गुस्सा उतना नहीं होता बल्कि उस व्यवस्था के प्रति होता है जिसमें प्रेम जैसे अमूल्य मानवीय संबंध को भी तराजू पर तौला जाता है। "खलनायिका और बारूद के फूल" शीर्षक कहानी की नायिका कुसुम के प्रति इसी रूप में पाठक की उतनी ही संवेदना जुड़ती है जितनी कि उस नायक के प्रति जो सिर्फ इसलिए कुसुम से शादी के अयोग्य घोषित कर दिया जाता है कि वह डाक्टर, इंजीनियर, ठेकेदार आदि कुछ न होकर मात्र एक कहानीकार है। यहाँ पर न केवल नायक का प्रेम पैसे के दाँव पर है, बल्कि इसके साथ ही साहित्यकार की भी इज्जत थोथी साबित हो जाती है। तात्पर्य यह है कि हमारे समाज में साहित्यकारों को भी तमाम मजबूरियों के आगे न केवल झुकना पड़ता है, बल्कि वे एक प्रेमी के रूप में भी रुपये से पराजित हो जाते हैं। यहाँ पर कहानी संवेदनात्मक स्तर पर और भी तेजी से जुड़ जाती है, और हमारे सम्पूर्ण जीवन संबंधों के आगे प्रश्न बनकर खड़ी हो जाती है। वह प्रश्न है कि अगर प्रेम कहानियाँ लिखने वाला कहानीकार

जब रुपये के आगे प्रेम संबंधों से वंचित किया जा सकता है, तो एक सामान्य प्रेमी-प्रेमिका की क्या स्थिति होगी ।

प्रेमिका के साथ संबंधों को जोड़ती हुई एक दूसरी ज्ञान की कहानी "रचना प्रक्रिया" है जो कुछ सीमाओं में मानवीय संबंधों को विभिन्न स्तरों पर महसूस करवाने में सफल है । कस्बाई जीवन में प्रेम संबंधों के विकास के बारे में क्या टीका-टिप्पणी झेलनी पड़ती हैं, किस प्रकार प्रेमी युगल को हर समय विरोधी प्रचारों का सामना करना पड़ता है, और इन प्रचारों के कारण किस प्रकार मानसिक दबावों में प्रेम संबंध शारीरिक संबंध की प्रक्रिया तक जा पहुँचता है, इसी बात को ज्ञानरंजन ने इस कहानी के माध्यम से बताने की कोशिश की है । उस कहानी में ज्ञानरंजन द्वारा प्रेमिका के संदर्भ में कुछ टीका-टिप्पणी को छोड़ दें, तो लगता है कि उस समाज में जहाँ प्रेम-संबंधों के विकास के लिए इजाजत नहीं है, दो प्रेमियों को किस भयानक मानसिक यंत्रणा से गुजरना पड़ता है । इस कहानी में प्रेमिका एक ऐसी लड़की है जो ऑफीसर परिवार से है, और जिसके पास जीवन की तमाम सुविधायें उपलब्ध हैं । पारिवारिक वातावरण में वह अपने प्रेम-संबंधों की बातचीत पिता आदि के साथ कर सकती है, और पिता इसमें उसकी मदद कर सकता है । यानी कुल मिलाकर एक आधुनिक माहौल है । इस आधुनिक आचार-विचार वाली लड़की को एक ऐसे कस्बाई जीवन में आना पड़ता है जहाँ प्रेम संबंधों की चर्चा वाद-विवाद का सर्वोच्च विषय है । इस परिस्थिति में प्रेमिका लगातार प्रेमी के प्रति झुकाव

महसूस करती चली जाती है, और फिर दोनों का आपसी संबंध सामाजिक चुनौतियों के साथ और भी प्रगाढ़ होता जाता है । तात्पर्य यह है कि इस प्रकार प्रेम की विरोधी शक्तियों के बीच प्रेमिका के साहस के साथ प्रेमी के प्रति समर्पण भाव एक स्तर पर विरोधी शक्तियों को चुनौती है, और इस चुनौती से संबंधों का और भी विकास संभव है । हालाँकि जब विरोधी शक्तियों द्वारा प्रेमी युगल के विरोध के बाद दोनों के बीच का सम्पर्क शारीरिक रिश्तों में बदल जाता है, और फिर प्रेमी युगल में दोषी चेतना घर करने लगती है, तो इससे दोनों के बीच मौजूद संबंधों की आध्यात्मिकता भी सब सामने आती है । ज्ञानरंजन इस प्रकार प्रेम संबंधों के मानवीय पक्ष पर जोर देते हैं ।

ज्ञानरंजन प्रेम के संदर्भ में "दिवास्वप्नी" नहीं हैं । वे इस बात को एक प्रेम संदर्भ के द्वारा बताने की कोशिश करते हैं । घटनाओं, परिघटनाओं के ठोस विश्लेषण के द्वारा उनका नायक चरित्र खुद इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि प्रेम के लिए समान रूप से प्रेमी युगल के बीच इच्छाशक्ति और वास्तविक स्थिति का होना आवश्यक है । इनको नजरंदाज कर अगर कोई प्रेम के विकास की आशा करता है, तो वह "दिवास्वप्नी" है, और उसके द्वारा प्रेमिका के लिए तमाम प्रतीक्षा, आशा बेमानी है । ज्ञानरंजन ने इस बात को बताने के क्रम में नायक की मनःस्थिति का जो चित्रण किया है, वह संवेदनात्मक स्तर पर बेहद मानवीय है । कहानी

का नायक इन्दो है, जो पंचमढ़ी घूमने आता है, और अपनी पूर्व प्रेमिका व वर्तमान में किसी की पत्नी मीरा को भी वहीं कुछ दिन बिताने के लिए आमंत्रित करता है। वह रोज मीरा की प्रतीक्षा करता है, डाकघर और अन्य सूचना की जगहों पर प्रतिदिन पूछताछ करता है, और अंततः मीरा का जबाब पाकर कि वह फिलहाल नहीं आ सकती भ्रमों से छुटकारा पा लेता है, उसका दिवास्वप्न खत्म हो जाता है। एक पूर्व प्रेमिका के लिए जो परिस्थितिवश उसकी पत्नी नहीं हो पाई, इन्दो की इच्छा काफी मानवीय लगती है, और उसके "दिवास्वप्नी" होने की बावजूद उसके साथ सहानुभूति प्रकट करने को बाधित करती है।

इसी प्रकार "सीमायें" शीर्षक कहानी में कहानीकार ने प्रेम संबंधों के बारे में दोहरे मानदंडों को रखा है, और ऐसे मान-दंडों को अपनाने वाले चरित्र के व्यवहार को उजागर किया है। विवेक अपने दोस्त यानी "मैं" से अपनी प्रेमिका से बातचीत करवाने और दोस्ती बढ़ाने में पहल करने के लिए मदद लेता है, परन्तु जब वही "मैं" विवेक की बहन सविता से प्रेम करने का प्रयास करता है, और सविता की इससे सहमति है, तो विवेक मर्यादित से बाहर होकर नायक को अपमानित करता है। प्रेम के संदर्भ में दुहरे मानदंड के कारण प्रेमी युगल बिछुड़ जाते हैं। इस प्रकार प्रेम टूटने से एक ओर तो विवेक के दुहरे चरित्र का पर्दाफाश होता है, दूसरी ओर कहानी संवेदनात्मक स्तर पर मजबूत हो जाती है। "छलांग" शीर्षक कहानी में भी श्रीमती ज्येल की छद्म नैतिकता के प्रहार से नायक को आघात

लगता है, और सामाजिक रूप से अस्वाभाविक प्रेम-संबंधों के विकास व मानवीय संवेदनाओं के बीच द्वन्द्व की अभिव्यक्ति होती है ।

छद्म बुद्धिजीवियों के संदर्भ में --

ज्ञानरंजन छद्म बुद्धिजीवियों के विरोधी हैं । "घंटा" नामक कहानी में ऐसे ही एक बुद्धिजीवी हैं, कुन्दन सरकार । कुन्दन सरकार के संपर्क में कहानी का नायक "मैं" आता है । वह कुन्दन सरकार के बारे में जान सका है कि वह एक ऐसा व्यक्ति है जो अपने दोस्तों को कीमती सिगरेटें, शराब पिलाया करता है । इसी उद्देश्य से वह अपने यार-दोस्तों के पेट्रोला को छोड़कर कुन्दन सरकार के साथ जा मिलता है । उसके पूर्ववर्ती साथी "पेट्रोला" में रहते हैं । "पेट्रोला" से तात्पर्य शहरी नौजवानों का मौज-मस्ती का अड्डा है । "पेट्रोला" के सदस्य सस्ती शराब व सिगरेटों की जगह बीड़ियों से काम चलाने वाले लोग हैं, और इसलिए उनके बीच अच्छी शराब, कीमती सिगरेटों के लिए तड़प होनी स्वाभाविक भी है ।

कुन्दन सरकार की आंगिठी में "मैं" को निराशा हाथ लगती है । वह कीमती सिगरेटों को पाकिट में रखे है और "मैं" की बीड़ियाँ फूंका करता है, और जनता की जिन्दगी जीने की बका-

लत किया करता है । वह जनता की बदहालही, फटेहाल होने का दिखावा करता है । कुल मिलाकर "मैं" के उन उद्देश्यों पर पानी फिर जाता है जिनके लिए वह कुन्दनसरकार के पास आया था

इसी बीच एक दिन कुन्दन सरकार "मैं" के साथ मिलिट्री कैंटीन में जाता है जहाँ शराब और राग-रंग का माहौल है, और लोग अपनी अपनी जोड़ी के साथ नाच रहे हैं । कुन्दन सरकार वहीं पर बेशकीमती "जीन" की बोतल खोलता है, और दोनों पीने लगते हैं । एक सुंदरी का नृत्य साथ-साथ चल रहा है । "मैं" का ध्यान सुंदरी के विभिन्न अंगों-प्रत्यंगों पर जाता है और अंतत: वह देखता है कि उस सुंदरी का गंदा नाड़ा लटक रहा है । इस संदर्भ में कहा जा सकता है कि हमारे समाज में सुंदरता का जो वीभत्स इस्तेमाल हो रहा है, और महिलाओं के जिस्म का जिस प्रकार शोषण हो रहा है, उसे कहानीकार चिन्हित करना चाहता है । इस पूरे माहौल से "मैं" को गुस्सा होता है, और वह कुन्दन सरकार को गालियाँ देने, सोडावाटर की बोतलें फेंकने के क्रियाकलाप में लग जाता है । फिर होटल के बेयरे और गुंडे उसे पीटकर होटल की सीढ़ियों से लुढ़का देते हैं । हालाँकि इस पूरे संदर्भ में श्रीमान "मैं" का गुस्सा अनियोजित व स्वत:स्फूर्त है, परन्तु जिस प्रकार समाज में अंधेरगर्दी व्याप्त है, और उसका विरोध नहीं हो पा रहा है, इस बिन्दु पर कहानी लोगों की संवेदना से जुड़ जाती है । पेदौला की जिन्दगी, छद्म बुद्धिजीवी

कुन्दन सरकार का जन प्रेमी होने का दिखावा, संभ्रांत परिवारों की सड़ी संस्कृति आदि का चित्रण दरअसल समाज में आ गये अमानवीय व्यवहारों को सूचित करते हैं, और इनके विकल्प में बेहतर मानवीय संदर्भों व रिश्तों की माँग करते हैं। यहाँ पर कहानी मानवीय रिश्तों के पुनर्सृजन की माँग करती है, और समाज में फैले अमानवीय व्यवहारों को दूर करने की आशा करती है। दरअसल मैं का होटल के गुंडों द्वारा पिट जाना एक अलग घटना नहीं है। यह इस बात को सूचित करती है कि पतनशील संस्कारों को जीने और प्रश्रय देने वाली शक्तियाँ न केवल संगठित व क्रूर हैं बल्कि अपने विरोधियों के खिलाफ संगठित और सख्त भी हैं। इस हालत में "मैं" की वापसी पुनः पेट्रोला में होती है जो इस बात को सूचित करती है कि पतनशील संस्कृति की विरोधी शक्तियाँ इस मनःस्थिति में नहीं हैं कि संगठित रूप से इनका मुकाबला कर सकें। और इस बात को भी बताती हैं कि ऐसी शक्तियों के विरोध के लिए पेट्रोला संस्कृति से जुड़े लोग नाकाफी हैं।

इसी प्रकार "बहिर्गमन" भी कि कहानी मानवीय चेतना और समाज में फैले भ्रष्टाचार व लोलुपता व विदेशी संस्कृति और धन के प्रति लोभ को केन्द्र में लेकर चलती है। इस कहानी का मुख्य चरित्र "मैं" सोमदत्त और मनोहर नाम के दो चरित्रों के माध्यम से यह बात कहलवा पाने में सफल हैं। ज्ञानरंजन ने मनोहर के ग्रामीण चरित्र के परिवर्तन के साथ शहरीकरण से उसमें आ

गई गंभीर खामियों की ओर इशारा किया है, और इस सत्य को बताया है कि अनियंत्रित शहरीकरण अंततः विदेशी सभ्यता के आगे घुटने टेक देता है, और इसका दासत्व स्वीकार करते हुए मातृभूमि से "बहिर्गमन" कर जाता है । यहाँ पर कहानीकार ने विदेशी वस्तुओं व विदेशी संस्कृति के मोहजाल में एक फंसते हुए भारतीय का मार्मिक चित्रण किया है, और इसे अन्य लोगों के लिए संप्रेषित करते हुए मनोहर और सोमदत्त जैसे चरित्रों से सावधान किया है । कहना न होगा, मनोहर और सोमदत्त मध्य वर्गीय चरित्र हैं, और कविता करना व अन्य बौद्धिक कार्यों में हिस्सा लेना उनकी रोजी-रोटी का हिस्सा है, और समाज के ऐसे लोगों का विदेशी मानसिकता में पतन अन्य तमाम लोगों के लिए सावधानी का कारण है ।

ऊपर लिखे तमाम संदर्भों में चाहे पिता-पुत्र संबंध हो, पारिवारिक रिश्ते हों, प्रेमिका के साथ जुड़ाव - अलगाव का प्रश्न हो, छद्म बुद्धिजीवियों को खोखलेपन को वर्णित करने का सवाल हो, ज्ञानरंजन मानवीय संदर्भों व संवेदनाओं को मुख्य कड़ी के रूप में स्वीकार करते हैं, और कहीं भी इस कड़ी से अपने को अलग नहीं करते । बल्कि कुछ संदर्भों में मानवीय संवेदना के छूटने के खतरे रहते हुए भी ज्ञानरंजन स्वयं को बचा लेते हैं, और तमाम परिस्थितियों, घटनाक्रमों व चरित्रों के माध्यम से मानवीय संबंधों को सम्प्रेषित व स्थापित करते हैं ।

मानवीय संबंधों की अभिव्यक्ति के साथ ही बेहतर मानवीय संबंधों के पक्ष में प्रेरणा जुटाने का काम ज्ञान की कहानियाँ करती हैं, और इसके लिए एक व्यापक संदर्भ को तलाशती हैं ।

ज्ञानरंजन की कहानियों का समग्र मूल्यांकन करने के बाद जो प्रश्न अनिवार्यतः दिखाई पड़ता है, वह है ज्ञानरंजन की सर्वश्रेष्ठ कहानी के संदर्भ में । या फिर ऐसी कौन सी कहानियाँ हैं जो ज्ञानरंजन को एक विशिष्ट कहानीकार के रूप में प्रस्तुत करती हैं । इस सिलसिले में आलोचकों और पाठकों के भिन्न विचार हो सकते हैं । ज्ञानरंजन ने एक कहानीकार के रूप में "एक मनहूस बंगला" से लेकर "घंटा" तक जो दस वर्ष की यात्रा की इसमें वे कहाँ से कहाँ तक पहुँचे इसके आधार पर सैद्धान्तिक दृष्टिकोण से विचार करने की जरूरत है न कि भावुकतापूर्ण ढंग से । प्रायः भावुकता में तथ्यों को सामाजिक विकास की व्यावहारिक समस्याओं से जोड़कर देखने में चूक होती है, और इससे रचना व रचनाकार के मूल्यांकन में कमजोरी रह जाती है ।

ज्ञानरंजन को एक सफल और महत्वपूर्ण कहानीकार के रूप में अगर मान लिया जाता है, तो यह जरूरी है कि इस मान्यता के पीछे उपस्थित तर्कों की जाँच की जाय । पुनः इस बात की भी जाँच जरूरी हो जाती है कि उन्हें किन कहानियों के आधार

पर एक महत्वपूर्ण रचनाकार माना जा रहा है, और आखिर इस मान्यता के तर्कों पर वे कहानियाँ खरी उतरती भी है या नहीं ।

ज्ञानरंजन की "घंटा" शीर्षक कहानी कुछ आलोचकों द्वारा प्रशंसित हुई है और इसे ज्ञान की कलात्मक उपलब्धि के सर्वोत्तम उदाहरण के तौर पर स्वीकार किया गया है । निस्संदेह "घंटा" शीर्षक कहानी में ज्ञानरंजन ने अपनी कलात्मक क्षमता का परिचय दिया है, परन्तु कथ्य के दृष्टिकोण से "घंटा" कहानी में अनेकानेक कमजोरियाँ मौजूद हैं । इन कमजोरियों को बगैर लक्ष्य किये इस रचना को सर्वश्रेष्ठ घोषित कर देना आलोचना का भावुक दृष्टिकोण है जिससे असहमत हुआ जा सकता है ।

सबसे पहले "घंटा" कहानी की उन कमजोरियों को देखना जरूरी है जिनके आधार पर इसे ज्ञान की सर्वश्रेष्ठ कहानी मानने की गलती की जाँच की सके । "घंटा" कहानी कथ्य के दृष्टिकोण से कमजोर कहानी है । यह सामाजिक यथार्थ के व्यावहारिक पहलुओं को नजरंदाज करती है, और मध्यवर्गीय सोच के साथ वैयक्तिक आक्रोश की स्वतःस्फूर्त अभिव्यक्ति से परिचालित है । और इस प्रकार के स्वतःस्फूर्त आक्रोश से सामाजिक परिवर्तन की माँग नहीं की जा सकती बल्कि इससे सामाजिक आंदोलन के लिए काम कर रहे लोगों में हताशा, निराशा, विभ्रम और पराजय का ही संचार होता है ।

किसी कहानीकार के लिए यह प्रशंसा की बात है कि वह छद्म बुद्धिजीवियों के व्यवहारों को जन समुदाय के बीच खोलकर रख दे । उसके लिए यह भी एक साहसिक प्रयास है कि समाज के तथाकथित सभ्य लोगों के अन्दर मौजूद गंदगियों व विकृतियों के बारे में तमाम लोगों को बताये । किसी भी कहानीकार के लिए इन सच्चाइयों का खुलासा करना सामाजिक विकास की शक्तियों के पक्ष में खड़ा होने और प्रतिगामी शक्तियों का विरोध करने का उदाहरण है । कुन्दन सरकार के छद्म बुद्धिजीवी चरित्र का पर्दाफाश करके और समाज में पनप गये कुलीन समुदाय के बीच मौजूद गंदगियों व उनके घृणित व्यवहारों का खुलासा कर ज्ञान ने एक सार्थक प्रयास किया है । यहाँ तक "घंटा" कहानी से कोई विरोध नहीं दिखाई पड़ता । परन्तु कहानी के मुख्य चरित्र का जिस प्रकार स्वतःस्फूर्त आक्रोश कहानी में दिखाया गया है, और उसकी जो अंतिम परिणति सामने आती है, वह कहानी को कथ्य के स्तर पर बेहद कमजोर कर देती है । और इस प्रकार कहानी से स्वतःस्फूर्त वैयक्तिक संघर्ष को बल मिलता है, व एक संगठित चिंतन के आधार पर कुन्दन सरकार और अधःपतन कुलीनों के खिलाफ संघर्ष करने के विचार का अभाव । सामाजिक परिवर्तन के लिए काम करने वाली शक्तियों को स्वतःस्फूर्त व वैयक्तिक आक्रामकता से कोई विशेष फायदा होने के बदले क्षति ही उठानी पड़ी है । "पूँजीवाद के भय से आक्रांत निम्न पूँजीपतियों का आक्रोश एक सामाजिक घटना है जो अराजकता की तरह ही पूँजीवादी देशों में मौजूद है ।

ऐसी क्रांतिकारिता की अस्थिरता, निष्फलता और इनकी तेजी से आत्मसमर्पित व उदासीन होने की प्रवृत्ति सारे लोगों की जानकारी में हैं ।[1] पूंजीवाद के भय से शुरू से घबराना और इसके खिलाफ अनियोजित तोड़फोड़ पर उतर आना पूँजीवादी शक्तियों द्वारा जनता पर निर्मम दमन व आतंक को आमंत्रित करना है । इस प्रकार की हरकतें क्रांति के विपक्ष में जाती हैं । किसी को क्रांतिकारी बनने के शौक का प्रमाणपत्र होटलों में स्वतः स्फूर्त "बगावत" करने से तो मिल सकता है, क्रांति के पक्ष में कोई सार्थक कार्यकर्ता बनने का प्रमाणपत्र नहीं दिया जा सकता । कुन्दन सरकार का पंटा बनने से इन्कार करना और उसे गाली देना, विलासी होटलों के शीशों को तोड़ना और पिटपिटाकर "पैट्रोला" नाम के उसी दड़बे में वापस हो जाना जहाँ विदेशी शराब के बदले देशी शराब, विदेशी सिगरेटों के बदले बीड़ी और टुटपुँजिया विचार व्यवहार उपलब्ध हैं, एक पूँजीवादी मानसिकता की अभिव्यक्ति है, और ऐयाश होटलों के अधःपतन संस्कार का ही पर्याय है, व सच कहा जाय तो क्रांतिकारी शक्तियों को इन दोनों संस्कृतियों से विरोध है । क्रांति के लिए पूंजीवादी भ्रष्ट संस्कृति के साथ निम्न पूँजीवादी बचकानापन भी विरोधी प्रवृत्ति हैं, और दोनों में से किसी की भी प्रशंसा नहीं की जा सकती ।

ज्ञानरंजन की कहानियों में पारिवारिक जीवन के संदर्भ

---

1. लेनिन, "लेफ्ट विंग कम्युनिज्म एन इनफैंटायल -- डिसऑर्डर, पृ0 16.

में लिखी गयी कहानियाँ ज्यादा गंभीरता के साथ बातों को रखती हैं। "अमरूद का पेड़", "पिता" या फेंस के इधर और उधर" शीर्षक कहानियों को उदाहरण के लिए रख सकते हैं। इन कहानियों में पारिवारिक जीवन के यथार्थ के साथ सामाजिक जीवन के यथार्थ साकार हो जाते हैं और पारिवारिक जीवन की कमजोरियों के खिलाफ पूरे समाज को सचेत होने की प्रेरणा मिलती है। इन कहानियों में "मैं" का कोई ज्यादा प्रभाव दिखाई नहीं पड़ता, और घटनाओं, परिघटनाओं के बीच सामाजिक जीवन के विभिन्न पात्र उभर कर आते हैं। उग्र नवयुवक आक्रोश के नाम पर इन कहानियों में गाली-गलौज के शब्द या वाक्य नहीं मिलते, और तथ्यात्मक रूप से वस्तुस्थिति का एक प्रेरणादायक विश्लेषण उभर कर आता है।

कथ्य के दृष्टिकोण से ज्ञानरंजन की सारी कहानियों का अगर व्यावहारिक विश्लेषण किया जाय तो "अमरूद का पेड़" शीर्षक कहानी उनकी एक महत्वपूर्ण रूप से श्रेष्ठ कहानी कही जा सकती है। यह कहानी वर्तमान स्थिति में काफी प्रासंगिक है, और इसके द्वारा सामाजिक विकास की शक्तियों को आम जनता के जीवन संदर्भों के यथार्थ को समझने में मदद मिलती हैं, और इससे अंततः जन समुदाय में मौजूद भ्रमों, अंधविश्वासों को खत्म करने में सहायता मिलने की उम्मीद बनती है। इस कहानी में कोई पात्र निरुद्देश्य आक्रोश से भी व्यथित नहीं दिखाई पड़ता, और न ही वह व्यक्ति-

गत वीरता के अंदाज में बोतलों के शीशे तोड़ता फिरता है । जब इसमें एक बात कही जाती है -- "उसकी कैंडल सी आँखों में एक छोटा सा तूफानी झोंका उठा, बैठ गया । उसका मुँह फूल गया था । मेरे लिए तसल्ली बस इतनी थी कि मुझे उसका क्षोभ अच्छा लगा क्योंकि यह क्षोभ मौजूदा सामाजिक परिस्थितियों में निहायत जरूरी है और क्योंकि यह जीवन का परिष्कार करता है, बशर्ते इस क्षोभ का संस्कार हो, और इसे स्वयं पोसा तथा सहा भी गया हो ।"[1] कहना ना होगा, यह पूरा कथन एक व्यापक संदर्भ को व्यक्त करता है, और इसमें सामाजिक परिवर्तन का चिंतन छिपा है । इस चिंतन में गंभीरता, सजगता व निरंतरता दिखाई पड़ती है, और सामाजिक परिवर्तन की जरूरत को व्यापक बनाने की कोशिश होती है । मिट्ठू की कैंडल सी आँखों में जो छोटा सा तूफानी झोंका दिखाई पड़ता है, वह तेजी से विभिन्न संदर्भों को व्यक्त करता है । यह गुस्सा अंधविश्वास के कारण अमरूद का पेड़ काट दिये जाने के परिणामस्वरूप ही न होकर उन तमाम शक्तियों के खिलाफ भी है जो समाज में भ्रम व सैद्धान्तिक ढुलमुल-पना को बचाये रखने में सहायक हैं, और प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से प्रतिगामी शक्तियों के सहयोगी हैं । ध्यान देने की बात है कि ज्ञानरंजन अपनी प्रारंभिक कहानी में इस मुद्दे से परिचित हैं, और इसे बेहद प्रभावशाली ढंग से अभिव्यक्त करते हैं । वे समाज के परिवर्तन के लिए क्षोभ व गुस्से को जरूरी मानते हैं, बशर्ते कि

---

1. अमरूद का पेड़ .

इस गुस्से का एक परिष्कार और संस्कार हो । यह परिष्कार और संस्कार और कुछ नहीं एक संगठन व आन्दोलन है । इस प्रकार वे व्यवस्था के खिलाफ अपने गुस्से को व्यक्त करने में सचेत, सजग और संगठित हैं, और इसलिए टिकाऊ भी हैं । "घंटा" कहानी में उनका यह गुस्सा एक असंगठित व स्वत:स्फूर्त सोच व व्यवहार को अभिव्यक्त करता है, और सिलसिलाकर सामाजिक परिवर्तन के पक्ष में कुछ हास्यास्पद ठहाके लगवाने से अभिप्रेरित है । अगर कहानीकार का बस इतना ही उद्देश्य है, तो कहानी इस उद्देश्य को गैर गंभीरता के साथ पूरा करती है । जबकि "अमरूद का पेड़" कहानी इससे बिलकुल उलट प्रेरणा लोगों को देती है, और अंधविश्वासों व सामाजिक भ्रमों को पालने-पोसने वाली ताकतों के खिलाफ व्यापक विरोध को बताती है ।

तात्पर्य यह है कि ज्ञानरंजन की एक कहानीकार के रूप में विशिष्टता, गंभीरता उन कहानियों में स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ती है जो पारिवारिक जीवन से जुड़ी कहानियाँ हैं, और एक संगठित सोच को व्यापक परिवर्तन के पक्ष में खोजती हैं । "अमरूद का पेड़" इन पारिवारिक जीवन को व्यक्त करने वाली कहानियों में श्रेष्ठ है, और इस कहानी में सामाजिक जीवन के पूरे बदलाव की आकांक्षा व्यक्त हुई है । इन कहानियों के आधार पर ज्ञानरंजन को एक बड़े कहानीकार के रूप में देखा जा सकता है । इन कहानियों में ज्ञान को और भी विकसित व प्रतिष्ठित होने की संभावना के बीज मौजूद हैं । ज्ञान अगर इस धरातल पर खड़ा होकर संगठित

चिंतन के आधार पर प्रयास करते, तो कलात्मक ऊंचाइयों को प्राप्त करते, और अपनी श्रेष्ठता को और मजबूती के साथ स्थापित करते हुए सामाजिक परिवर्तन की दिशा में कलात्मक प्रकाश-स्रोत का काम करते ।

---

## पंचम् अध्याय --

## ज्ञानरंजन का रचना शिल्प --

शिल्प के संदर्भ में ज्ञानरंजन की कहानियाँ नये पहलुओं को जोड़ती हैं। ज्ञानरंजन अपनी कहानियों को किसी बने बनाये साँचे में नहीं ढालते बल्कि इनमें नये रूपों, को खोजने का प्रयास करते हैं। वे अपनी कहानियों को भाषा और शिल्प के आधार पर लगातार विकसित करने का प्रयास करते हैं, और कहानी लेखन में रूढ़ मान्यताओं को तोड़ने की कोशिश करते हैं।

ज्ञानरंजन की कहानियाँ "मैं" शैली में लिखी गई हैं। उनकी कहानियों में प्रायः मूल चरित्र "मैं" होता है, और उसी के माध्यम से कहानीकार घटनाओं, परिघटनाओं में प्रवेश करता चला जाता है। ज्ञानरंजन न केवल ऐसे तथ्यों का चुनाव करते हैं जिनका मध्यवर्गीय संस्कारों से विशेष रूचि है, वरन् रचनात्मक रूप से वे तथ्यों को इस प्रकार रखते हैं कि उनमें विशेष आकर्षण पैदा हो जाता है।

ज्ञानरंजन की भाषा चुस्त और सधी हुई है । वे जो कहना चाहते हैं, अपनी भाषा से कहलवा लेते हैं, और ऐसा करते हुए वे किसी उदारता या परहेज से काम नहीं लेते, वरन सहजता व पूरे विश्वास के साथ तथ्यों को भाषिक साँचे में गढ़ते जाते हैं, और इसप्रकार घटनाओं में रोचकता पैदा कर देते हैं । उनकी वाक्य संरचना और पूरे वर्णनों की बुनावट तथ्यों को ज्यादा से ज्यादा प्रभावशाली बनाने के उद्देश्य से परिचालित होती है, और इस उद्देश्य में ज्ञान कुल मिलाकर सफल भी हैं ।

ज्ञानरंजन की कुछ कहानियाँ भाषिक स्तर पर गंभीरता के साथ तथ्यों को रखने का प्रयास करती हैं । ज्ञानरंजन इन कहानियों में भाषा की संवेदना को पूरे तौर पर बनाये रखते हैं । इन कहानियों में वर्णन की पूरी शैली धीमी गति से चलती है, और कहानी सपाट ढंग से कुछ संदर्भों को उद्घाटित करती हुई निष्कर्ष पर पहुँचने का प्रयास करती है । प्रायः इस प्रकार की कहानियों में ज्ञान ने पारिवारिक जीवन को प्रस्तुत करने का प्रयास किया है, और इसके तहों में मौजूद विभिन्न समस्याओं को उभारने का प्रयास किया है । "अमरूद का पेड़", "पिता", "फेंस के इधर और उधर" इस श्रेणी की कहानियाँ हैं ।

पारिवारिक जीवन को कहानियों में चित्रित करने में ज्ञानरंजन एक पूरे परिवार के अहसासों के साथ जुड़े रहते हैं । वे

परिवार के आसपास मौजूद विभिन्न संदर्भों को बड़ी कुशलता के साथ खोज निकालते हैं, और उनपर पूरे वातावरण के साथ कलात्मक रंग चढ़ाते हैं। अपनी इस कुशलता के साथ ज्ञानरंजन पारिवारिक जीवन को चित्रित करते हुए एक पूरे पारिवारिक वातावरण को उसके रूप, रंग के साथ उतार देते हैं। इस रूप, रंग के साथ कहानी अपनी कलात्मकता के साथ निखरती है।

ज्ञानरंजन जहाँ पारिवारिक जीवन को अपनी कहानियों के विषय के रूप में चुनते हैं, वहाँ वे आश्वस्त भाव से पारिवारिक जीवन के विभिन्न संदर्भों को उभारने का प्रयास करते हैं। इन कहानियों में उनकी भाषा सधी - सँवरी है, और इसमें अनावश्यक आक्रामकता से बचने का प्रयास है। यह शायद इसलिए भी संभव हुआ है कि पारिवारिक जीवन संदर्भों को प्रस्तुत करते समय भाषिक आक्रामकता अनावश्यक है, और ज्ञान इस तथ्य को एक कहानीकार के नाते समझने में सफल हैं। "अमरूद का पेड़" ज्ञानरंजन की प्रारंभिक कहानियों में है, और इस कहानी में वे पारिवारिक विघटन को चित्रित करने का प्रयास करते हैं, और साथ ही यह भी बताते हैं कि इस पारिवारिक विघटन के कारणों को लोग किसप्रकार अंधविश्वास में ढूंढने का प्रयास कर रहे हैं, और इसके सहारे पारिवारिक एकता व खुशी की कल्पना कर रहे हैं। इस बात को बताने के लिए ज्ञान

कोई लम्बी कहानी की तलाश करने नहीं जाते । वे बस घर की घटना के साथ जो कहना चाहते हैं उसे कह देते हैं । अमरूद का पेड़ अगर दरवाजे पर अशुभ है, और पारिवारिक खुशी के लिए घरवाले इसे काट देते हैं तो यह किसी अमरूद के पेड़ मात्र का काटा जाना न होकर एक समाज के विकास को काटने के समान है । इस प्रकार ज्ञान के लिए अमरूद का पेड़ कोई सामान्य पेड़ नहीं है, यह वर्तमान पीढ़ी की आशा, और उसका विश्वास है, और इसके फलीभूत होने में पूरे समाज की खुशी है । इस प्रकार ज्ञान ने अमरूद के पेड़ का प्रयोग एक प्रतीक के रूप में किया है जो बेहद सटीक है ।

ज्ञानरंजन की कहानियाँ प्रतीकों और बिम्बों के प्रयोग में सफल हैं । ज्ञान प्रतीकों और बिम्बों को कहानी में अलंकार के रूप में मात्र इस्तेमाल नहीं करते बल्कि इसे कहानी की पूरी अन्तर्वस्तु के साथ अटूट ढंग से जोड़ते हैं । प्रतीकों में इस प्रकार कहानी की अन्तर्वस्तु का मूल रूप व्याख्यायित होता है । उदाहरण के तौर पर "पिता" शीर्षक कहानी को हम देख सकते हैं । इस कहानी में पिता एक पिता मात्र न होकर पुरानी रूढ़ियों और रूढ़ मूल्यों के प्रतीक हैं । ये रूढ़ मूल्य सामाजिक विकास को रोकने वाले हैं, और वैज्ञानिक प्रगति के खिलाफ हैं । ज्ञानरंजन द्वारा पिता को इन मूल्यों के प्रति समर्थन और संरक्षण व्यक्त करते दिखाने के पीछे एक पूरी पीढ़ी के अहसास को और इसकी मान्यताओं को व्यक्त

करना है । और यह काम पिता एक पिछली पीढ़ी के व्यक्ति होने के नाते कर पाते हैं । यहाँ पर कहानीकार ने पिता के पुराने आग्रहों की आलोचना तो की है, परन्तु उसकी भाषा बेहद संयत है । और भाषा का संयत होना पिता - पुत्र के रिश्ते से भी बँधा है । इस प्रकार ज्ञानरंजन भाषा के स्तर पर न केवल रिश्तों को समझते हैं, परन्तु इसके प्रयोग के बारे में भी काफी सतर्क हैं । और इससे कहानीकार का रिश्ते के साथ ही भाषा के प्रति सम्मान प्रदर्शन का भी भाव परिलक्षित होता है ।

भाषा के साथ ज्ञानरंजन की गंभीरता "फेंस के इधर और उधर" कहानी में भी बनी रहती है । इस कहानी में ज्ञानरंजन ने फेंस को दोनों ओर रहने वाले दो परिवारों के जीवन-व्यवहार का चित्रण किया है । यहाँ भी कहानी पुराने व्यवहारों और नये व्यवहारों के द्वन्द्व को प्रस्तुत करने का प्रयास करती है, और नये व्यवहारों का पक्ष समर्थन करती है । कहानी को इस प्रकार दो घरों के विभाजन में स्थापित कर ज्ञानरंजन ने ठोस व्यवहारों के जरिये उन सामाजिक मूल्यों की आलोचना की है जो समाज में सभ्यता और संस्कृति की पुरानपंथी धारणा को बनाये रखने में मददगार हैं । उन्होंने दोनों परिवारों के व्यवहारों को पूरे पारिवारिक वातावरण के साथ कहानी में उकेरते हुए, बहुत ही तार्किकता के साथ समाज में लागू किये जाने वाले विवेकशील मूल्यों को स्थापित करने

का प्रयास किया है । इस स्थापना में कहीं भी ऐसा नहीं लगता कि लेखक कोई मूल्य या मान्यता कहानी में थोपने पर उतावला है, वरन् जीवन परिवेश ही कुछ इस ढंग से संचालित हैं जिसमें विवेकसंगत मूल्यों के पक्ष में समर्थन सहज ही उभर कर आ जाता है ।

ज्ञानरंजन की प्रेम संबंधी कहानियाँ, या दाम्पत्य जीवन को बताने वाली कहानियों में भाषा की गंभीरता खत्म हो जाती है, और लेखक तथ्यों को हास्य के स्तर पर लेता चला जाता है । ज्ञान-रंजन तथ्य को जिस ढंग से प्रस्तुत करना चाहते हैं उसी के हिसाब से से वे भाषा का सृजन करते हैं । ज्ञान की प्रेम या दाम्पत्य से जुड़ी कहानियो में प्रायः इन चीजों के प्रति हल्कापन का भाव है । प्रेम के संदर्भ में ज्ञानरंजन कोई गंभीर रुख नहीं रखते बल्कि इसे आई गई चीज के तौर पर मानते हैं । लगता है वे प्रेम संबंधों को हल्का आँक कर एक विद्रोह के भाव को दिखाना चाह रहे हैं । अक्सर उनके इस आग्रह के कारण ही कथ्य की गंभीरता खत्म हो जाती है । बावजूद इसके यह कहा जा सकता है कि ज्ञानरंजन कथ्य को भाषिक कुशलता के साथ रूप, रंग प्रदान करने में सफल हैं, और इससे वे अपने मन के अनुकूल काम लेते हैं । "रचना-प्रक्रिया", छलांग", "छलनायिका" और बारूद का फूल", दाम्पत्य" आदि कहानियों के आधार पर यह बात कही जा सकती है ।

ज्ञान की वे कहानियाँ जिनमें उन्होंने छद्म बुद्धिजीवियों के बारे में वर्णन किया है उनमें भाषा के स्तर पर एक प्रकार की तीव्रता दिखाई पड़ती है । छद्म बुद्धिजीवियों के व्यवहारों का आलोचक कहानीकार उन्हें बेनकाब करने का प्रयास करता है और इस कोशिश में झूठे बुद्धिजीवियों के खिलाफ विभिन्न तथ्यों को कलात्मक रूप से पेश करना चाहता है । परन्तु ऐसे बुद्धिजीवियों के खिलाफ उसके अंदर नफरत उसकी भाषिक संरचना के साथ ही परिलक्षित होता है, जब वह बुद्धिजीवियों के वर्णन में अश्लीलता की सीमा में प्रवेश कर जाता है । छद्म बुद्धिजीवियों के प्रति नफरत प्रदर्शन के लिए इसप्रकार के वाक्य कहाँ तक जरूरी हैं, इस पर भी विचार आवश्यक है, परन्तु इतना कहा जा सकता है कि ज्ञानरंजन भाषा के प्रयोग के बारे में इन संदर्भों में उतना संयत नहीं हैं, और इस बात को बताने के लिए वे भाषा को अपनी इच्छा के अनुसार रच-गढ़ लेते हैं । उदाहरण के लिए इस वाक्य को हम देख सकते हैं ---"ये सब मध्यवर्गीय लेखक थे, जिनका खाते उसका बजाते भी खूब थे । जहाँ से आदमी की पूँछ झड़ गई है, इन लोगों के उस स्थान में, कुन्दन सरकार को देखते ही खुजली और अहोभाग्यपूर्ण गुदगुद होने लगता था । कुन्दन सरकार और बुद्धिजीवियों के सम्पर्क को ताकने वाले बहुत से दर्शक चारों तरफ फैले हुए थे जिन्होंने शहर के जागरूक केन्द्रों में कुन्दन सरकार की हवा बाँध रखी थी ।"[1]

---

1. घंटा,

ज्ञानरंजन यथार्थ को काट-छाँट कर उसे संप्रेषणीय और प्रभावशाली बनाते हैं । वे समकालीन मुहावरों तथा जुमलों का प्रयोग करते हुए यथार्थ को धारदार बना कर पेश करते हैं । जरूरत के अनुसार वे विचारों को उपयुक्त वाक्यों में बदलते हैं । उनके वाक्य और उसमें मौजूद शब्द यथार्थ को पूरी जीवंतता के साथ प्रस्तुत करते हैं । वे अपनी कहानियों में ऐसे जुमलों का इस्तेमाल करते हैं जिससे संप्रेषित तथ्य और भी साफ ढंग से पाठक के सामने खुल जाते हैं । ये जुमले इस प्रकार हैं -- ब्लाटिंग पेपर में फैलती स्याही जैसा सौंदर्य । माँ पर जाती तो बेहूदगी से मुक्ति मिल जाती । किसी संयुक्ताक्षर का अपेक्षित हलंत या लहरों द्वारा फेंका हुआ मरता फेन । हमारी नागरिकता एक दुबले हाड़ की तरह किसी प्रकार बची हुई है आदि । इसी प्रकार ज्ञानरंजन कुछ शब्दों का प्रयोग कर अर्थ को ज्यादा प्रभावशाली बनाने का प्रयास करते हैं । ये शब्द इस प्रकार हैं -- चैतन्य चुतियापा । इकसठ बासठ करना । डाँगर चिरईजान । अमुक प्रदेश आदि । इस प्रकार के कुछ शब्दों के प्रयोग पर आपत्ति हो सकती है, परन्तु ये शब्द कहानी के जुड़े संदर्भों को प्रभावशाली ढंग से बताने का प्रयास अवश्य करते हैं ।

ज्ञानरंजन अपनी कहानियों में "टाइप" चरित्रों को रखते हैं । उनकी कहानियों के चरित्र घटनाओं, परिघटनाओं, और मध्यवर्गीय व्यवहारों का प्रतिनिधि पात्र होते हैं । यह प्रतिनिधि पात्र मध्यवर्गीय जीवन के अंतर्विरोधों और इसकी संवेदनाओं को

अभिव्यक्त करते हैं । परिवार के संदर्भ में प्रेम के संदर्भ में, दाँपत्य के संदर्भ में या अदम बुद्धिजीवियों के संदर्भ में ज्ञानरंजन ने ऐसे प्रतिनिधि पात्रों को प्रतिनिधि परिस्थितियों के साथ चित्रित किया है । ज्ञानरंजन के "टाईप" चरित्र इस प्रकार घटनाओं व तथ्यों के सामान्यीकृत प्रस्तुतीकरण के साथ नहीं होते, परन्तु इनके साथ तथ्य और भी उभर कर आते हैं, और लोगों को अच्छा-बुरा का तेजी से अहसास करा पाते हैं । इस प्रकार ये "टाईप" चरित्र यथार्थ को इसकी सम्पूर्णता में प्रस्तुत करते हैं, और इस सम्पूर्णता के साथ विशिष्टता के पहलू भी विद्यमान होते हैं । उदाहरण के लिए "पिता" कहानी का मुख्य चरित्र "पिता" या "घंटा" कहानी का मुख्यचरित्र "मैं" या फिर दूसरा चरित्र कुंदन सरकार स्वयं में प्रतिनिधि परिस्थितियों के प्रतिनिधि रूप हैं । ये चरित्र अपने संदर्भों में तमाम तथ्यों को प्रस्तुत करते हैं, परन्तु एक चरित्र के रूप में उनकी विशिष्टता भी बरकरार रहती है ।

ज्ञानरंजन अपनी कहानियों में कहानी लेखन के बने बनाये दायरे को तोड़ते हुए चलते हैं । संवादों की निरर्थकता और वातावरण के अरुचिकर वर्णन में वे नहीं फँसते, बल्कि भाषा पर अपना पूरा नियंत्रण और संतुलन बनाये रखते हैं । वे इस प्रकार के नियंत्रण के माध्यम से गद्य के रूढ़िबद्ध रूपों को तोड़ते हुए उसमें लयात्मकता पैदा करते हैं, और इनकी भाषा तेजी से पद्यात्मक होती चली जाती है । कहानी की भाषा में लयात्मकता और संगीतात्मकता पैदा करना शब्दों और वाक्यों में नया जीवन संचार करना है ।

ज्ञानरंजन की कहानियाँ शिल्प और कथ्य के स्तर पर द्वन्द्वात्मकता के रिश्ते से जुड़ी है । तात्पर्य यह कि ज्ञानरंजन की कहानियाँ शिल्प और कथ्य एक दूसरे से अलग-थलग दिखाई नहीं पड़ती वरन् पूरी घनिष्ठता के साथ एक दूसरे से साथ जुड़े होती हैं, और यह कहना प्रायः मुश्किल है कि अमुक कहानी में शिल्प प्रधान स्थिति में है या कथ्य । शिल्प और कथ्य के स्तर पर न केवल संतुलन बनाये रखना बल्कि एक दूसरे को पूरक व सहायक के रूप में इस्तेमाल करना ज्ञानरंजन की लेखन शैली की विशेषता है । और यह विशेषता उन्हें एक महत्वपूर्ण रचनाकार के रूप में प्रतिष्ठित करवा पाने में सफल है ।

ज्ञानरंजन स्वयं को अलंकारिक भाषा के प्रयोग से बचाने का प्रयास करते हैं । वे भाषा को जरूरत से ज्यादा न तो साज-श्रृंगार प्रदान करने के हिमायती लगते न इसे फटेहाल ही रख छोड़ने के पक्ष में हैं । वे भाषा की समृद्धि को सामाजिक चिंतन और व्यवहार की समृद्धि से जोड़कर देखते हैं, और भाषिक कौशल को इसकी पूरी स्वाभाविकता के साथ निखारने का पक्षपोषण करते हैं । इसप्रकार वे भाषा को एक आवश्यक जरूरत के तौर पर इस्तेमाल करते हैं नाकि सिर्फ वाग्जाल के तौर पर । वे यथार्थ को उद्घाटित करने के लिए, इसकी सार्थक आलोचना के लिए भाषा का इस्तेमाल करते हैं, और इसके बारे में काफी उत्साही भी हैं । इसलिए उनकी रचनाकुशलता अलंकरण से पीड़ित न होकर सामाजिक जरूरत से संचालित हैं और जीवन के अच्छे-बुरे अनुभवों को प्रस्तुत करने के लिए औजार के रूप में प्रयुक्त हुई है ।

ज्ञानरंजन वर्णन में कहीं कहीं अश्लीलता पर उतर आते हैं, और इससे उनकी रचनात्मक क्षमता कमजोर हुई है । वे ऐसे संदर्भों में जहाँ स्त्री या प्रेमिका आदि का प्रसंग हो अश्लील शब्दों में बात करना प्रारंभ कर देते हैं, और इससे न केवल उनकी एक गंभीर कहानीकार की छवि धूमिल नहीं होती है, बल्कि शिल्प के स्तर पर भी कहानी कमजोर होती है । वे औरतों का वर्णन करते समय उनकी चोली को पीकदान, नितम्ब को कमांडमांट, और स्तन को कटहल कहते हैं, और इसप्रकार के शब्द प्रयोग से न केवल औरतों के प्रति असम्मान का भाव प्रदर्शित करते हैं, बल्कि एक कुशल रचनाकार की गंभीरता से वंचित हो जाते हैं । और यही कारण है कि नारी संदर्भ में लिखी उनकी कहानियाँ शिल्प और कथ्य के स्तर पर कमजोर हैं ।

ज्ञानरंजन की भाषा की गंभीरता प्रायः उन कहानियों में मिलती है जिनमें वे पारिवारिक जीवन को चित्रित करते होते हैं । इन कहानियों में भाषा तथ्यों के साथ अपनी पूरी स्वाभाविकता समेत जुड़ी होती है, और कहीं भी ऐसा नहीं लगता कि कहानीकार को वाक्य-रचना के लिए कोई विशेष प्रयास करना पड़ रहा है । बिल्कुल सहज और स्वाभाविक रूप से इन कहानियों में तथ्यों के साथ शब्द और वाक्य बढ़ते चले जाते हैं, और अंततः एक पूरी कथा का निर्माण करते हैं । लेकिन इस सहजता में एक प्रवाह है, भाषा की स्वाभाविक रचना प्रक्रिया है । यह रचना प्रक्रिया जीवन की

गहराइयों में उतरने, उसमें अच्छा बुरा तलाश करने, अच्छा को प्रसारित करने और बुरा को छोड़ देने के उद्देश्य से संचालित हैं ।

ज्ञानरंजन अपनी कहानियों को एक कुशल चित्रकार की तरह "पेंट" करते हैं । वे शब्दों, वाक्यों के प्रयोग से कथ्य के इर्द-गिर्द विभिन्न रूप-रंग को सजाते हैं, और इसके द्वारा तथ्यों की अस्पष्टता को कलात्मकता के साथ सम्प्रेषणीय बना देते हैं । वे अपनी वर्णन शैली को किसी अबूझ संदर्भ के साथ जोड़ कर सिर्फ शिल्प का भ्रम खड़ा नहीं करते बल्कि पूरी स्पष्टता के साथ तथ्यों को उभारने के लिए विभिन्न रंगों, वर्णनों का सहारा लेते हैं, तात्पर्य यह कि वे एक ईमानदार रचनाकार के रूप में हैं, और इसलिए शिल्प व कथ्य दोनों के बीच सार्थक सम्बन्ध व सन्तुलन बनाये रखते हैं । इसलिए उनका रचना कौशल सिर्फ शिल्प का कौशल या फिर मात्र कथ्य के चुनाव पर आधारित नहीं है, बल्कि इन दोनों के सार्थक प्रयोग से संचालित है ।

इस प्रकार शिल्प के संदर्भ में ज्ञानरंजन की अपनी विशिष्टता दिखाई पड़ती है । इस विशिष्टता में ज्ञानरंजन का एक स्वतंत्र कहानीकार का व्यक्तित्व और एक सफल रचनाकार होने का गुण मौजूद है । रचना कौशल के मुताबिक भी इसलिए ज्ञानरंजन एक महत्वपूर्ण हस्ताक्षर के रूप में स्वीकार किये जा सकते हैं ।

----------

## उपसंहार --

ज्ञानरंजन ने अपनी कहानियों में मध्यवर्गीय जीवनपरिस्थितियों को चित्रित किया है। कहानीकार तमाम पात्रों को मध्यवर्ग से उठाता है और इसे मध्यवर्गीय दृष्टिकोण से व्याख्यायित करने का प्रयास करता है। उन्नीस सौ पचास के बाद के नई कहानी आंदोलन से जुड़े कथाकार भी प्रायः इसी सीमा के अन्तर्गत कहानी लेखन करते हैं, और साठोत्तरी पीढ़ी के कहानीकार के नाते ज्ञानरंजन इस परम्परा के साथ जुड़े दिखाई देते हैं। परन्तु इसी समय अकहानी नामक कहानी की एक विशेष प्रवृत्ति से प्रभावित होते हुए भी वे इससे अपने को अलग कर लेने का प्रयास करते हैं। इतना ही नहीं ज्ञानरंजन नई कहानी और अकहानी की प्रवृत्तियों के बीच से स्वयं की एक छवि बनाने की कोशिश करते हैं, और अपनी कहानियों के माध्यम से वे एक विशिष्ट रचनाकार के रूप में स्थापित होने का प्रयास करते हैं।

ज्ञानरंजन मध्यवर्गीय जीवन रूचियों के कथाकार होने के बावजूद मध्यवर्गीय जीवन के निर्मम आलोचक भी हैं। यह सही है कि वे यथार्थ के गतिशील पहलुओं के साथ मध्यवर्ग को ठीक से जोड़ नहीं पाते, परन्तु यह भी सही है कि वे मध्यवर्गीय जीवन के विभिन्न आवेगों-संवेगों को समय के बदलते यथार्थ के साथ प्रस्तुत करने का

प्रयास करते हैं । ज्ञान की कहानियों में मध्यवर्गीय जीवन की घुटन और पीड़ा विभिन्न संदर्भों में व्यक्त हुई है, और वे इस घुटन व पीड़ा का वर्णन करने में काफी सफल हैं । इस प्रकार वे मध्यवर्गीय चेतना के कहानीकार होते हुए भी एक कहानीकार के रूप में प्रशंसित होने लायक हैं । प्रथम अध्याय में इन बिन्दुओं को रखा गया है ।

ज्ञानरंजन का कथालेखन उन्नीस सौ साठ के बाद से शुरू होता है, और लगभग एक दशक तक उनकी कहानी यात्रा समाप्त हो जाती है । साठ से सत्तर के बीच का समय भारतीय इतिहास का एक महत्वपूर्ण काल है, और इस अवधि में भारतीय समाज के राजनीतिक सामाजिक, सांस्कृतिक संदर्भों में विचारधारात्मक और व्यावहारिक परिवर्तन लक्षित किये जा सकते हैं । ज्ञानरंजन की कहानियों के विकास-क्रम पर ये परिवर्तन निस्संदेह असर डालते हैं । यही कारण है कि उन्नीस सौ साठ का कहानीकार जहाँ व्यवस्था के खिलाफ एक संगठित गुस्से की जरूरत को रेखांकित करता है, वहीं सत्तर तक आते-आते वह स्वतःस्फूर्त विरोध के समर्थन में आ खड़ा होता है । यह स्वतःस्फूर्त विरोध बुद्धिजीवियों के उस हिस्से के खिलाफ है जो कथनी और करनी में एकता स्थापित करने में असफल साबित होते हैं । व्यवस्था के खिलाफ गुस्सा और संगठित विरोध की जीत को रेखांकित करने वाला कथाकार उन्नीस सौ सत्तर के आसपास असंगठित गुस्से के पक्ष में क्यों चला आता है, और इससे संगठित आन्दोलन को क्या फायदे और नुकसान हैं, ये महत्वपूर्ण प्रश्न ज्ञानरंजन की कहानियों के विकासक्रम के संदर्भ में दिखाई पड़ते हैं । और स्वतःस्फूर्त गुस्से व क्रोध के खतरों को ध्यान में रखते हुए गंभीर व संगठित विरोध के पक्ष

में समर्थन देना जरूरी लगता है । ज्ञानरंजन के एक कहानीकार के रूप में विकासक्रम को इसी दृष्टिकोण से दूसरे अध्याय में प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है ।

ज्ञानरंजन एक कथाकार के रूप में मध्यवर्गीय जीवन के यथार्थ को लेकर चलने का प्रयास करते हैं । यह मध्यवर्गीय जीवन का यथार्थ सामाजिक जड़ता और अंधविश्वास के साथ प्रेम संबंधों के टूटने-जुड़ने व बुद्धिजीवी समुदाय के एक हिस्से के छद्म व्यवहारों में अभिव्यक्त होता है । ज्ञान यथार्थ के इन पक्षों को अपनी कहानियों में रखने का प्रयास करते हैं । ज्ञानरंजन की कहानियाँ मध्यवर्गीय जीवन संदर्भों में उतरने का प्रयास करती हैं, और इनमें मौजूद विभिन्न कमजोरियों को तलाशते हुए इनकी आलोचना करती है । इस प्रकार ज्ञानरंजन मध्य-वर्गीय जीवन के यथार्थ को प्रस्तुत करने में ~~[illegible]~~ या परहेज से काम नहीं लेते । दूसरी तरफ वे इस यथार्थ को सामाजिक विकास के साथ ठीक से जोड़ नहीं पाते, और इस प्रकार यथार्थ को अपनी मध्यवर्गीय सीमा में ही जाँचने-परखने की कोशिश करते हैं । यथार्थ को चित्रित करने के संदर्भ में ज्ञानरंजन का यह कमजोर पहलू है । तीसरे अध्याय में इन्हीं बातों को रखने का प्रयास किया है ।

ज्ञानरंजन की कहानियाँ बेहतर मानवीय संबंधों की जरूरत पर जोर देती हैं । यह संबंध चाहे परिवारीक संदर्भ में हो, पिता के संदर्भ में, पत्नी के बारे में या बुद्धिजीवी समुदाय के बारे में ।

ज्ञानरंजन इन तमाम संदर्भों में जीवन मूल्यों में आई गिरावट को मानवीय संवेदनाओं के साथ व्याख्यायित करने का प्रयास करते हैं, और इनके विकल्प के रूप में अच्छे मानवीय संबंधों की आवश्यकता को प्रतिपादित करते हैं। ज्ञानरंजन पिता, पत्नी, प्रेमिका, मित्र, बुद्धिजीवी आदि तमाम लोगों के व्यवहारों के आलोचक हैं, और इनकी आलोचना करते हुए बेहद मानवीय हैं। उनकी कहानियों में इन संबंधों की आलोचना के साथ मानवीय अहसास व स्पन्दन उभर कर आते हैं। इसीकारण से ज्ञानरंजन द्वारा मानवीय संबंधों की निर्मम आलोचना भी लोगों को अखरती नहीं, और लोगों में उसके प्रति गुस्सा पैदा नहीं करती। इसके विपरीत पाठक की संवेदनायें कहानीकार की संवेदनाओं के साथ मानवीय आधार पर एकता कायम कर लेती हैं।

ज्ञानरंजन की कुछ प्रारंभिक कहानियाँ पूरी गंभीरता के साथ मानवीय जीवन के संदर्भों को चित्रित करती हैं, और समाज की कमजोरियों, व इसमें मौजूद विभिन्न प्रकार की जड़ताओं के खिलाफ संगठित विचार प्रस्तुत करती हैं। भाषा व विचारों की गंभीरता, परिपक्वता के कारण ही पारिवारिक जीवन की इन कहानियों का विशेष महत्त्व है। इन कहानियों में "अमरूद का पेड़" शीर्षक कहानी विशेष तौर से इस विश्लेषण के साथ जुड़ती है, और इसीकारण चतुर्थ अध्याय में इस कहानी के प्रति शोध का विशेष आग्रह दिखाई पड़ता है।

शिल्प के संदर्भ में श्री ज्ञानरंजन अपनी विशेषता रखते हैं। वे भाषा के स्तर पर और कहानी को रूप के स्तर पर विकसित करने

का प्रयास करते हैं । उनकी भाषा बड़ी ही कलात्मकता के साथ कथ्य को चित्रित करती है, और अपना प्रभाव छोड़ती है । ज्ञान एक रचनाकार के रूप में भाषा पर अपनी पूरी पकड़ रखने की कोशिश करते हैं, और इस कोशिश में वे सफल भी हैं । उनकी भाषा पद्य और गद्य की सीमा रेखाओं को तोड़ती चलती है, और प्रायः गद्य अपनी पूरी पद्यात्मकता के साथ काव्यात्मक रूप ग्रहण करने लगता है । ज्ञानरंजन अपनी भाषा में पूरी चित्रात्मकता के साथ उपस्थित होते हैं, और वातावरण को "पेंट" करने में एक कुशल चित्रकार की कसौटियों पर उतरते दिखाई पड़ते हैं । रचना-शिल्प के संदर्भ में ज्ञानरंजन के बारे में ये मूल्यांकन पाँचवें अध्याय में प्रस्तुत है ।

इन तमाम संदर्भों में ज्ञानरंजन कथ्य और रचनाशिल्प के आधार पर एक बड़े कहानीकार के रूप में प्रस्तुत हैं, और उनके बारे में यही मूल्यांकन शोध में निष्कर्ष रूप में रखने का प्रयास किया गया है । ऐतिहासिकता, विकासक्रम, यथार्थ के प्रस्तोता, मानवीय संबंधों के सार्थक आलोचक के साथ ज्ञानरंजन एक कुशल कहानीकार हैं और अपनी समग्रता में एक महत्वपूर्ण कथाकार के रूप में हिन्दी साहित्य में प्रतिष्ठित होने की योग्यता रखते हैं ।

---------

## सामग्री सूची


1. डा० मधुरेश - आज की हिन्दी कहानी ।

2. बटरोही - कहानी संवाद का तीसरा आयाम, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली ।

3. डा० विजय मोहन सिंह - आज की हिन्दी कहानी, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली ।

4. डा० यदुनाथ सिंह - समकालीन हिन्दी कहानी, चित्रलेखा प्रकाशन, 170 अलोपी बाग, इलाहाबाद ।

5. डा० इन्द्रनाथ मदान - हिन्दी कहानी : पहचान और परख, लिपि प्रकाशन, दिल्ली ।

6. डा० इन्द्रनाथ मदान - समकालीन साहित्य एक नई दृष्टि, लिपि प्रकाशन, दिल्ली ।

7. डा० लक्ष्मी सागर वार्ष्णेय - समकालीन हिन्दी कहानी, साहित्य भवन, जीरो रोड, इलाहाबाद ।

8. "नई कहानी का ज्ञानरंजन," संपादक डा० सतीश जमाली, डा० सत्यप्रकाश चित्रलेखा प्रकाशन, इलाहाबाद ।

9. "ज्ञानरंजन की कहानियों का समय और समाज", डा० मलय, मूल्यांकन, कहानीकार अंक, रामनगर, हजारीबाग

10. "ज्ञानरंजन की कहानियाँ", डा० विश्वनाथ प्रसाद तिवारी, प्रतिमान, सम्पादक-श्याम किशोर सेठ, सिविल लाइंस, शाहजहाँपुर ।

11. "सपना नहीं की समीक्षा", डा० अलख कुमार, आकाशवाणी पत्रिका ।

12. बहिर्गमन कहानी पर आनंद प्रकाश का लम्बा लेख, युग परिबोध में प्रकाशित ।

13. दिनमान में "यात्रा" कहानी पर सर्वेश्वर दयाल सक्सेना की लम्बी टिप्पणी ।

14. गिरिलाल जैन का लेख, टाइम्स आफ इंडिया में पूर्व प्रकाशित ।

15. निर्मल वर्मा का अंग्रेजी निबंध, हिन्दुस्तान टाइम्स में प्रकाशित

16. निर्मल वर्मा का साक्षात्कार, पूर्वग्रह में प्रकाशित।

17. लेनिन, लेफ्ट विंग कम्युनिज्म एन एनफैंटायल डिसआर्डर।

18. ल्यू श्यायोची, हम अच्छे कम्युनिस्ट कैसे बनें।

--------